ख़ुशबू तेरे बदन की

अर्श सहबाई

ख़ुश्बू तेरे बदन की

- अर्श 'सहबाई'

नाम किताब	:	ख़ुश्बू तेरे बदन की
मुसन्निफ़	:	'अर्श' सहबाई
कम्प्यूटर कम्पोज़िंग	:	सार्थ क्रिएशन्ज़, हाऊसिंग कॉलोनी जानीपुर, जम्मू। (# 94192-86314)
अशाअत	:	2009
तेदाद	:	1000 अदद
क़ीमत	:	250/- रुपए

नाशिर :-

मानवी प्रकाशन

पंजतीर्थी, जम्मू - 180001

अफ़्शा[1] होगा राज़[2] ये
जब होगी तहक़ीक़[3]
मैं उस की तख़्लीक़[4] हूँ
या वो मिरी तख़्लीक़

'अर्श' सहबाई

1. ज़ाहिर 2. भेद 3. खोज 4. पैदाइश, पैदा करना

इन्तिसाब

एक उर्दू नवाज़

जनाब एम. ए. अंजुम

के नाम

यक़ीनन आशना-ए-फ़िक्र-ओ-फ़न हैं
वो अपनी ज़ात में इक अंजुमन हैं

'अर्श' सहबाई

It gives me an immense pleasure to learn that Janab Arsh Sehbai's new venture "KUSHBOO TERE BADAN KI" is to be published in the Devnagri script on the continous demand of the non-Urdu knowing readers and admirers of Arsh. Arsh indeed is the "Abroo-e-Ghazal and the book mentioned above shall be welcomed and appreciated by both the Hindi and Urdu lovers of poetry in and outside the country.

Janab Kaifi Aazmi once introduced Begum Akhtar on the stage with the remarks that there are two names of ghazal, one being the ghazal itself and the other Begum Akhtar. The same can hold true in case of Arsh Sehbai as well. Arsh's simplicity, careful selection of words and fashioning the language while composing versus are perhaps the reasons behind his broader acceptability.

The very fact that he does not live in clouds and is realistic about the affairs of the heart and is least offensive in clude him in the category of top ghazalgo's like Faiz, Jigar-Moradabadi and Iqbal.

I congratulate Arsh and wish him all the best in his future life.

Dr. Ashok Hastir
594-R.R. Colony,
Civil lines,
GURDASPUR (Pb)
Mobile : 099140 14333

दिल के खण्डरात में भी शहर बसे हैं क्या-क्या
'अर्श' इस वादी-ए-हसरत से गुज़र कर देखो

'अर्श' सहबाई

अन्दर से कुछ टूटा-टूटा लगता है
वो सब में रह कर भी तनहा लगता है

मैं अपनी ही बात को झुटला देता हूँ
मैं ख़ुद से बरहम[1] हूँ ऐसा लगता है

कुछ मन्ज़र आँसू लाते हैं आँखों में
दिल टूटे तो और भी अच्छा लगता है

ये भी कोई साज़िश है इन आँखों की
जो मिलता है वो उस जैसा लगता है

मुझ को अपनी ही आवाज़ नहीं आती
मीलों तक गहरा सन्नाटा लगता है

वादे का पाबन्द नहीं हरगिज़ लेकिन
देखने में वो कितना अच्छा लगता है

उस के दिल पर गहरी चोट लगी होगी
बुझा-बुझा बिखरा-बिखरा सा लगता है

अब दिल में अहसास कहाँ तनहाई का
साथ है मेरे कोई साया लगता है

1. नाराज़

उस के ज़िक्र पे आँखें भर सी आती हैं
पूछते है सब वो मेरा क्या लगता है

ढूँढने पर भी मिलता नहीं है उस का निशाँ
ग़म कोई आसेब[2] का साया लगता है

दिल में था जज़्बात का तेज़ बहाव कभी
अब ये आलम ठहरा-ठहरा लगता है

ख़ून के आँसू भी पीने पड़ जाते हैं
होंटों पर जब ज़ब्त का पहरा लगता है

दिल के ज़ख़्म हरे होते हैं सावन में
इस मौसम में ग़म का मेला लगता है

यही मुहब्बत की मैराज[3] है शायद 'अर्श'
जो कोई मिलता है अपना लगता है

2. भूत 3. इन्तिहा

दिल का लहू निचोड़ न फ़न की तलाश कर
इस बे-शऊर[1] दौर में फ़िक्र-ए-मुआश कर

नाहक़ भटक रहा है किसी के ख़्याल में
इस ज़िद्द को छोड़ और खुद अपनी तलाश कर

मुझ से न पूछ मेरी हक़ीक़त की दास्ताँ
ये ज़िन्दगी का राज़[2] है इस को न फ़ाश कर

दिल को न हादसात के रहम-ओ-करम पे छोड़
इस आईने को ख़ुद भी कभी पाश-पाश[3] कर

शहर-ए-ख़िरद[4] अगर न तुझे रास आ सके
शहर-ए-जुनूँ[5] में आ के कभी बूद-ओ-बाश[6]
क र

मैं तुझ को क्या बताऊँ मुझे खुद ख़बर नहीं
बैठा हूँ किस की याद के पत्थर तराश कर

महलों में क्या मिलेगा वफ़ा का सुराग़ 'अर्श'
ये चीज़ झोंपड़ों की है इन में तलाश कर

1. बे–सलीक़ा, बे–अक़्ल 2. भेद 3. टुकड़े–टुकड़े करना
4. अक़्ल वालों का शहर 5. दीवानों का शहर 6. रहना

झुक गई उसकी की वो नज़र कितनी
बात की उसने मुख़्तसर कितनी

राह-रौ[1] हैं जो उनके चेहरों पर
आज है गर्द-ए-रह-गुज़र[2] कितनी

इतनी फ़ुर्सत कहाँ कि वो आते
दिल को उम्मीद थी मगर कितनी

फिर भी तशना-लबी[3] न दूर हुई
गो घटा छाई झूम कर कितनी

इक ज़रा उसके मुस्कराने से
हो गई बात बे-असर कितनी

सिर्फ़ फूलों के लम्स[4] की ख़ातिर
ओस रोती है रात भर कितनी

हम से ही बे-नियाज़ हैं वरना
आप रखते है हर ख़बर कितनी

और कितनी है रात की ज़ुल्मत[5]
और नज़दीक है सहर कितनी

1. मुसाफ़िर 2. रास्ते की धूल 3. प्यास 4. छूना 5. अन्धेरा

हर ग़लत बात से गुरेज़[1] मुझे
ये भी तोहमत है मेरे सर कितनी

कट ही जायेगी वो जो बाक़ी है
ज़िन्दगी हो गई बसर कितनी

हर घुटन दिल की अश्क बन-बर कर
आज बरसी है टूट कर कितनी

हर नज़र में हैं मोअजज़े[2] कितने
हर नज़र उनकी कारगर[3] कितनी

'अर्श' ने इल्म-ओ-फ़न के सहरा में
ख़ाक छानी है उम्र भर कितनी

1. दूर रहना 2. जादू 3. असर करने वाली

दूर तक इन्तिशार है मैं हूँ
रास्ते का गुबार है मैं हूँ

सैंकड़ों हादसे है बिखरे हुए
वक़्त की रहगुज़ार है मैं हूँ

मुस्कराते हैं फूल ज़ख़्मों के
हुस्न-ए-रंग-ए-बहार है मैं हूँ

तूने जो अज़ रह-ए-करम बख़्शा
वो ग़म-ए-पुर-वक़ार है मैं हूँ

आप खुद देखते कभी आकर
आप का इन्तिज़ार है मैं हूँ

उस की सोहबत में ख़ूब कटती है
ये दिल-ए-बे-क़ंरार है मैं हूँ

आरज़ूओं का अब हुजूम कहाँ
हसरतों का मज़ार है मैं हूँ

हल्का-हल्का सरूर है दिल में
दर्द की जू-ए-बार है मैं हूँ

'अर्श' इस से है दायमी रिश्ता[1]
गर्दिश-ए-रोज़गार है मैं हूँ

1. हमेशा रहने वाला रिश्ता

बे-सबब वो सज़ायें देता है
फिर भी ये दिल दुआयें देता है

काटता जा रहा है वो हर पेड़
जो भी ठण्डी हवायें देता है

दश्त-ए-माज़ी से जब गुज़रता हूँ
ज़र्रा-ज़र्रा सदायें देता है

अपनी पहचान भी नहीं रहती
वक़्त क्या-क्या सज़ायें देता है

किस की आवाज़ है ये कानों में
कौन मुझ को सदायें देता है

इक समुन्दर है उस का दिल जो फ़क़ीर
हर किसी को दुआयें देता है

वो नहीं मुत्मईन मिटा कर भी
मिटने वाला दुआयें देता है

आज तक है वो राज़[1] सर-बस्ता
रूह को जो क़बायें देता है

मैं कि उलझा हुआ हूँ हाल में 'अर्श'
मुझको फ़र्दा[2] सदायें देता है

1. छुपा हुआ भेद 2. मुस्तक़बिल, आने वाला वक़्त

कब तार-तार हो ये दमकता हुआ लिबास
पहने हुए है ज़िन्दगी जो खुशनुमा लिबास

तै कर चुका जो तर्क-ए-तमन्ना के मरहले
उस बे-नियाज़ के लिए क्या राख क्या लिबास

आसेब कह के उस को पुकारो न दोस्तो!
इक रूह ढूँढती है कहाँ है मिरा लिबास

इन्सानियत का ख़ून रगों में है मुन्जमिंद[1]
जिस्मों पे रह गया है फ़क़त खुशनुमा लिबास

मरकज़ बना हुआ है निगाहों का अंग-अंग
आरास्ता किये हुए निकले वो क्या लिबास

उस शोला-रौ की मस्त निगाहों में शोख़ियाँ
इक गुलबदन पे जैसे भड़कता हुआ लिबास

साबत न रह सकी किसी मरियम की आबरू
शहर-ए-हवस[2] में धज्जियाँ बन कर उड़ा लिबास

इन्सान रोज़ बेचता है अज़मत-ए-ज़मीर
इन्सान रोज़ चाहता है इक नया लिबास

ऐ 'अर्श' मुझको अहल-ए-ज़माना से क्या ग़रज़
सब से जुदा असूल हैं सब से जुदा लिबास

1. जमा हुआ 2. हवस के शहर में

न साहिल है न साहिल का निशाँ है
मिरी कश्ती मगर फिर भी रवाँ है

कदूरत[1] सर-ब-सर इक खुश्क सहरा
मुहब्बत एक बहर-ए-बेकराँ है

कभी ये ज़िन्दगी वजह-ए-मुसर्रत
कभी ये ज़िन्दगी बार-ए-गराँ[2] है

ग़रीबी, मुफ़िलसी, बे-रोज़गारी
मिरा हिन्दोस्ताँ जन्नत निशाँ है

कहूँ क्या इक घुटन सी है वहाँ तक
जहाँ तक ये हिसार-ए-जिस्म-ओ-जाँ[3]
है

जहाँ रहता हूँ मैं इक दिल की सूरत
वो शहर-आरज़ू अब बे-निशाँ है

नज़र में दूर तक है उसका चेहरा
नज़र में दूर तक इक कहकशाँ है

महक से पुर है हर इक लफ़्ज़ उसका
किसा का ज़िक्र ज़ेब-ए-दास्ताँ[4] है

नहीं है 'अर्श' हम आवाज़ उसका
ज़माना इस लिये भी बदगुमाँ है

1. नफ़रत 2. बोझ 3. जिस्म और ज़िन्दगी की दीवार
4. कहानी की शान

किस पे हँसना है किस पे रोना है
हो के रहता है जो भी होना है

खुल ही जाएगा जब परख होगी
कौन पीतल है कौन सोना है

हर अमल का यहाँ है रद्द-ए-अमल
काटना है वही जो बोना है

मौज-ए-तूफ़ाँ कभी इधर से गुज़र
इक ज़रा नाव को डुबोना है

यकजा करता हूँ अपने अश्कों को
इक लड़ी में इन्हें पिरोना है

मेरा जश्न-ए-वफ़ात कब होगा
मुझ को उस में शरीक होना है

सोचता हूँ कि ज़िन्दगी में और
कितना हँसना है कितना रोना है

बाख़तन है मेरी जनम भूमि
उस की मिट्टी भी मुझको सोना है

बाँटता है वो तल्ख़ियाँ सब में
जिस की फ़ितरत में ख़ार बोना है

ज़िन्दगी कुछ दिनों के हँगामे
और फिर गहरी नींद सोना है

दिल के इस शहर-ए-आरज़ू में मुझे
और कब तक ख़राब होना है

ज़िन्दगी है उभरता सूरज 'अर्श'
इस को आख़र ग़रूब होना है

बशर की ख़ामियों के ये बहुत नज़दीक होती है
ज़माने की नज़र भी किस क़दर बारीक होती है

यही इक शम्अ है जो नूर फैलाती है दुनिया में
अगर बुझ जाये दिल तो ज़िन्दगी तारीक होती है

उसी लम्हे की कैफ़िय्यत है महरूम-ए-बयाँ[1] अब तक
वो लम्हा ज़िन्दगी जब मौत के नज़दीक होती है

हक़ीक़त के बहुत नज़दीक होता है कलाम उसका
दिल-ए-शायर को जब माहौल से तहरीक होती है

निज़ाम-ए-नौ[2] की बज़्म आराईयों की ये रविश तौबा
कि जिन से बज़्म-ए-हस्ती और भी तारीक होती है

कभी साबित-क़दम[3] रहते नहीं परवर्दा-ए-ज़ुल्मत[4]
सितारे काँपते हैं जब सहर नज़दीक होती है

जनाब-ए-'अर्श' के अशआर हैं यकसर दलील इसकी
ये सुनते थे कि शायर की नज़र बारीक होती है

1. बयान नहीं हो सकी 2. नया निज़ाम 3. मज़बूत क़दम
4. अन्धेरे के पाले हुए

नज़रों में बस गया है कोई दूधिया बदन
गंगा में जिस तरह हो नहाया हुआ बदन

कितने ही राग फूटते है अंग अंग से
तन्हाईयों में है कोई नग़्मा-सरा[1] बदन

इक धीमी-धीमी आँच सी आती रही मदाम[2]
इक धीमी-धीमी आग में जलता रहा बदन

इस में न आरज़ू, न उमंगें न वलवले
दिल है किसी ग़रीब का ठिठरा हुआ बदन

होते नहीं है ख़त्म मसायब के सिलसिले
वो बोझ आ पड़ा है कि दुखने लगा बदन

बिगड़ी हुई समाज की सूरत है इस तरह
जैसे किसी चिता में कोई अधजला बदन

माहौल में घुटन है फ़ज़ाओं[3] में बेहिसी
अफ़्सुर्दा हाल दोनों है क्या रूह क्या बदन

है ज़िन्दगी कि जिस्म कोई टूटता हुआ
इक कर्ब में है शाम-ओ-सहर मुब्तिला बदन

होता है शर्मसार बशर का ज़मीर 'अर्श'
करता है ज़िन्दगी में जो कोई ख़ता बदन

1. नग़्मा गा रहा 2. हमेशा 3. वातावरण

धूप की शिद्दत में सूखे पेड़ का साया बहुत
डूबने वाले की नज़रों में है इक तिनका बहुत

उस की ज़हनियत[1] पे हम जायें तो वो बौना लगे
देखने में उस का क़द हर शख़्स से ऊँचा बहुत

इस तरह है दिल में माज़ी की हसीं यादों का अक्स
जैसे रेगिस्तान में बादल का इक टुकड़ा बहुत

सख़्त नादिम हूँ ग़लत था मेरा हुस्न-ए-इन्तिख़ाब
मुसतहिक़ कब था जिसे जी-जान से चाहा बहुत

दिल की तस्कीं के लिए हमने तराशे हैं ख़ुदा
इन ख़ुदाओं ने मगर अक्सर दिया धोका बहुत

इक घड़ी रुक कर न जाने फिर कहाँ खो जाऊँगा
मैं मुसाफ़िर हूँ मुझे दीवार का साया बहुत

अब किसी भी बात की कोई ग़लत फहमी नहीं
ज़िन्दगी! हमने तुझे चाहा बहुत, परखा बहुत

उस की कुर्बत[2] भी हो हासिल ये ज़रूरी तो नहीं
ज़िन्दा रहने के लिए यादों का सरमाया बहुत

ये गुमाँ होता था जैसे रूह का रिश्ता हो 'अर्श'
उस ने इस अन्दाज़ से पहरों मुझे देखा बहुत

1. अक़्ल 2. साथ

इक नया रंग ख़्यालात में भरना है मुझे
फ़िक्र के गहरे समुन्दर में उतरना है मुझे

क्या अजब मरहले हैं जिन॰ से गुज़रना है मुझे
ग़म भी सहने है कई सब्र भी करना है मुझे

ज़ब्त की आख़री हद से भी गुज़रना है मुझे
ज़िन्दगी में कभी ये मोअजज़ा करना है मुझे

मैं किसी तौर न सुनता कभी आवाज़-ए-ज़मीर
ये अगर जानता हर गाम बिखरना है मुझे

रू-ब-रू मौज-ए-तलातुम[1] की है दीवार खड़ी
मुझ को मालूम है किस घाट उतरना है मुझे

मुझ को पाना है शरफ़ उसकी क़दम-बोसी का
राह में गर्द की मानिन्द बिखरना है मुझे

अपनी धुन में हूँ रवाँ जानिब-ए-मंज़िल लेकिनं
वो पुकारे तो बहर गाम[2] ठहरना है मुझे

और कुछ देर में बढ़ जायेगी वुसअत[3] मेरी
एक साया हूँ सर-ए-शाम बिखरना है मुझे

आब जू बन के रहूँ या कोई दरिया ऐ 'अर्श'
आख़िर-ए-कार समुन्दर में उतरना है मुझे

1. तूफ़ान की मौज 2. हर क़दम पर 3. फैलाव 4. नदी

जिन की सूरत को हम तरसते हैं
वो तो मुद्दत से दिल में बसते हैं

मयकदा भी है दैर-ओ-काबा भी
एक मंज़िल है कितने रस्ते हैं

मैं भी तो आप ही का परतव[1] हूँ
किस लिए आप मुझ पे हँसते हैं

नफ़रतों की हैं ज़ुल्मतें दिल में
अब भी ग़ारों में लोग बसते हैं

जिन में कुछ तल्ख़ियों का उन्सर[2] हो
ऐसे अल्फ़ाज़ दिल को डसते हैं

झोंपड़ों का भी एहतराम करो
झोंपड़ों में भी लोग बसते हैं

अब तो परछाईयाँ नहीं उन की
अगले वक़्तों को हम तरसते हैं

शहर में वो भी मुत्मईन होगा
गाँव में हम भी रस्ते-बसते हैं

'अर्श' की सादगी को क्या कहिये
देख कर जिस को लोग हँसते हैं

1. साया 2. हिस्सा

बे-मानी सही बेशक अश्कों की रवानी भी
सौ हश्र उठाता है आँखों का ये पानी भी

उस चश्म-ए-ग़ज़ालां[1] की तारीफ़ कहाँ तक हो
वो मतल-ए-अव्वल भी, वो मतल-ए-सानी भी

इक वक़्त में दो मौसम, देखे न सुने हमने
होंटों पे हँसी भी है, आँखों में है पानी भी

हम उस के ख़सायल[2] के मुद्दत से है गरवीदा[3]
ख़लिक़ है वफ़ाओं का वो जोर का पानी भी

नज़रों से निहाँ लेकिन, मौजूद हर इक शय में
वो एक हक़ीक़त भी, वो एक कहानी भी

कुछ लोग अभी तक तो इख़्लास से मिलते हैं
हो जायेगी दो दिन में ये रस्म पुरानी भी

ये फ़ैज़ है कुदरत का उस शख़्स की बातों में
गंगा का तक़द्दुस[4] भी जमना की रवानी भी

फिर दिल में ख़्याल आया ये ज़ेब[5] नहीं देता
हमने जो कभी उससे, टकराने की ठानी भी

ऐ 'अर्श' तबीअत को दोनों ही न रास आये
जम्मू की ये मिट्टी भी, जम्मू का ये पानी भी

1. महबूब की आँख 2. ख़ूबियाँ 3. चाहने वाला 4. पवित्रता
5. ठीक नहीं

इक गर्द की मानिन्द बिखर जाती हैं आँखें
जब याद कोई आता है भर आती हैं आँखें

अहसास ये डसता है उन्हें किस से करें बात
तन्हाईयों में बे-तरह घबराती हैं आँखें

मन्ज़र हो हसीं और उन्हें रास न आये
ऐसा हो अगर खुद से भी कट जाती हैं आँखें

झुकती नहीं सजदे में कभी उनकी अना है
सो बार किसी दर से पलट आती हैं आँखें

धुँधलाने से लगते हैं जब उन यादों के साये
ऐसे में कभी और भी तड़पाती हैं आँखें

लाज़म नहीं हो मेरी तरह ग़मज़दा[1] जो भी
मैं किस से कहूँ किस लिये भर आती हैं
अ ा ँ ख ा े .

नज़रों में कभी उस के हवाले से जो उभरें
फिर ऐसे मनाज़िर से लिपट जाती हैं आँखें

लगता है कि इन में कोई नाज़ुक सा है रिश्ता
जब चोट लगे दिल पे तो भर आती हैं आँखें

ऐ 'अर्श' सर-ए-राह मुलाक़ात हो जब भी
मिल कर उसे किस दरजा सकूँ पाती हैं आँखें

1. ग़म का मारा हुआ

इसके हर मन्ज़र पे मिट जा इसका पस-मन्ज़र न देख
ज़िन्दगी इक ख़ोल है इस ख़ोल के अन्दर न देख

ग़म के सूरज की तमाज़त से पिघल जायेंगे ये
राहतों के आरज़ी से ख़ुशनुमा पैकर न देख

तेरे हर नग्मे की लय में जज़्ब है मेरा वजूद
मैं फ़क़त आवाज़ हूँ आवाज़ को छू कर न देख

इक झलक अपनी दिखा कर डूब जाना है इन्हें
आसमाँ पर जगमगाते ये मह-ओ-अख़्तर न देख

दरहम-ओ-बरहम न हो जाय कहीं दिल का सकूँ
ख़्वाहिशों की खिड़कियों से झाँक कर अन्दर न देख

तेरा फ़न है नग़्मा-साज़ी, साहिरी[1] तेरा हुनर
दिल में जो पैवस्त हैं टूटे हुए नश्तर न देख

इक सकूत-ए-बेकराँ के कर्ब को महसूस कर
फैंक कर ख़ामोश पानी में कभी पत्थर न देख

मस्लिहत के दौर में सब का चलन मश्कूक है
कौन है रहज़न की सूरत कौन है रहबर न देख

वो हसीं यादें तुझे कुछ और तड़पायेंगी 'अर्श'
आबदीदा[2] हो के माज़ी की तरफ़ मुड़कर न देख

1. जादूगरी 2. आँसुओं से भरी आँखें

ज़िन्दगी की आरज़ू दिल की तमन्ना आप हैं
मेरी दुनिया आप से है मेरी दुनिया आप हैं

क्या है मफ़हूम-ए-मुहब्बत[1], क्या है मफ़हूम-ए-बहार
उससे पूछे कोई ये जिस की तमन्ना आप हैं

एक मरकज़ पर सिमट आई है सारी कायनात[2]
ये गुमाँ होता है बस दुनिया में तनहा आप हैं

जिस की रानाई[3] से ताबिन्दा[4] है मेरी ज़िन्दगी
मेरी आँखों में वो रंगीं ख़्वाब-ए-फ़र्दा[5] आप हैं

मुझको दुनिया की किसी शय से भी हो क्या वास्ता
हर घड़ी जब मरकज़-ए-चश्म-ए-तमन्ना आप हैं

उस को हर आलम में हासिल है सकून-ए-ज़िन्दगी
साहिब-ए-क़िस्मत है वो जिस के मसीहा आप हैं

घिर गई है कश्ती-ए-हस्ती मिरी तूफ़ान में
डूबते को जो सहारा दे वो तिनका आप हैं

'अर्श' साहब हर क़दम पर आप खाते हैं फ़रेब
किस क़दर ना-आशना[6]-ए-अहल-ए-दुनिया आप
ह

1. मक़सद 2. दुनिया 3. ख़ूबसूरती 4. चमकना 5. आने वाले कल का सपना 6. नावाक़िफ़

जिन पर निसार करते रहे अपना दीन लोग
गुज़रे निगाह-ए-शौक़ से क्या-क्या हसीन लोग

अहल-ए-कलम, मुग़न्नी, मुसव्विर, सनम-तराश मिलते
हैं मयकदे में बला के ज़हीन लोग

बेमानी सा है ऐसे में तनक़ीद-ओ-तब्सिरा
हर बात पर चढ़ाते है जब आस्तीन लोग

सौ दिल-फ़रेब[1] नक्श रहे ज़ीनत-ए-निगाह
लेकिन न मिल सके कहीं दिल के हसीन लोग

फिर नेक-ओ-बद में रहता नहीं कोई इम्तियाज़
इक बार बेच देते हैं जब अपना दीन लोग

पत्थर को पूजते हैं कदूरत[2] बशर से है
क्या कहिये दिल में रखते हैं क्या-क्या यक़ीन लोग

पर्दे में क्यों है सुब्ह-ए-मसर्रत छुपी हुई
रहने लगे हैं ज़ुल्मत-ए-ग़म के रहीन[3] लोग

ऐ 'अर्श' ज़िन्दगी में कोई पूछता नहीं
फिरते है ख़्वार दहर में अक्सर ज़हीन लोग

1. दिल को धोका देने वाले 2. नफ़रत 3. मातहत, ज़ेर–ए–असर

ऐसे में हम फ़क़ीरों को रास आए क्या समाज
हम हैं वफ़ा-शनास, जफ़ा-आशना समाज

अक्सर बदलता रहता है रुख़ दूसरा समाज
करता है बात-बात पर महशर बपा समाज

कितनी ही आरज़ुओं का इस ने किया है ख़ून
कितनी ही ख़्वाहिशात का मक़्तल बना समाज

जिस में हो इस की एक भी ख़ामी पे तब्सरा
ऐसे हर एक जुर्म की देगा सज़ा समाज

मैं हम ख़्याल आप का शायद न बन सकूँ
शायद न रास आए मुझे आप का समाज

जिस में ख़लूस है न मुहब्बत न ज़िन्दगी
तामीर कर रहा है बशर इक नया समाज

आगे बढ़ा मै कुहना रसूमात[1] तोड़ कर
हैरत से देखता रहा मुझको मिरा समाज

जो ज़ी-वक़ार उड़ायें शराफ़त की धज्जियाँ
उन मुजरिमों को देता है हर आसरा समाज

ऐ 'अर्श' इस पे मैंने जो तनक़ीद की कभी
अपनी जगह से जैसे सरकने लगा समाज

1. पुरानी रस्में

फ़ज़ा में नग़मगी सी घोलती हैं
जुबाँ चुप है वो आँखें बोलती हैं

लरज़ जाती हैं अक्सर पत्तियाँ भी
कि जब शबनम की बून्दें डोलती हैं

जुबा दी है ये किस ने पत्थरों को
ऐलोरा की गुफायें बोलती हैं

नहीं कोई जो देखे झाँक कर अब
हवायें खिड़कियाँ क्यों खोलती हैं

गुज़रती हैं जो दिल पर वारदातें
वो दिल में तल्ख़ियाँ सी घोलती हैं

जुबाँ से कुछ नहीं कहते वो लेकिन
नज़र में आरज़ूयें डोलती हैं

उन आँखों में अजब ऐजाज़[1] है ये वो
चुप रह कर भी कितना बोलती हैं

उसे क्या इल्म ये मासूम नज़रें
हज़ारों राज़ दिल के खोलती हैं

कहाँ ऐ 'अर्श' अब शख़्सीयतें वो
मसायल[2] की जो गिरहें खोलती हैं

1. जादू 2. उलझी हुई बातें

उस के मुक़ाबिल मैं अदना-सा लगता हूँ
वो सूरज है मैं ज़र्रा-सा लगता हूँ

आँखें छलक रही हैं लब है सूखे से
दरिया हूँ लेकिन सहरा-सा लगता हूँ

मुझ में जज़्ब हैं दुनिया भर के अफ़साने
यूँ तो काग़ज़ का टुकड़ा-सा लगता हूँ

मुझे कहाँ जाना है ये मालूम नहीं
बहते पानी में तिनका-सा लगता हूँ

मेरे साथ मसायब का है एक हुजूम
हैरत है फिर भी तनहा-सा लगता हूँ

मेरी अज़मत[1] मेरी ख़ामोशी में है
चुप हूँ तो सागर गहरा-सा लगता हूँ

इक मुद्दत से तू जो नहीं है साथ मेरे
चलता-फिरता इक साया-सा लगता हूँ

मेरे बारे में कोई भी राय हो
मिलने वालों को अपना-सा लगता हूँ

'अर्श' मुझे इस से हरगिज़ इन्कार नहीं
उस के सामने इक ज़र्रा-सा लगता हूँ

1. बड़ापन

उस दिल में क़याम अपना नज़र से हैं बहुत दूर
हम घर में भी रहते हुए घर से हैं बहुत दूर

माहौल पे छाई हुई ज़ुल्मत[1] जो मिटा दे
हम लोग अभी ऐसी सहर से हैं बहुत दूर

वो चश्म-ए-करम मुझ पे भी मायल तो थी लेकिन
घिर आए थे बादल जो वो बरसे हैं बहुत दूर

कैफ़िय्यत-ए-दिल हम करें ज़ाहिर भी तो किस पर
अफ़सोस कि हम तेरे नगर से हैं बहुत दूर

जब घर में नज़र आए नहीं तुम किसी लम्हा
कुछ ऐसा लगा हम को कि घर से हैं बहुत दूर

उन का भी मिरे दिल पे है हर नक़्श नुमायाँ
दिल दोज़ मनाज़िर[2] जो नज़र से हैं बहुत दूर

दा़वा़ है उन्हें वो है ज़माने के मसीहा
जो ज़िन्दगी की राह गुज़र से हैं बहुत दूर

कब इस से बग़लगीर हों ये सोच रहे हैं
कुछ ऐसे सफ़ीने जो भँवर से हैं बहुत दूर

आबाद हमें होना है इक रोज़ यहीं 'अर्श'
तस्लीम अभी शम्स-ओ-क़मर से हैं बहुत दूर

1. अन्धेरा 2. दिल में दर्द पैदा करने वाले मन्ज़र

कितने खुशरंग ख़्वाब बुनता हूँ
रेज़ा-रेज़ा वजूद चुनता हूँ

उन पे तेरा गुमाँ गुज़रता है
दूर से आहटें जो सुनता हूँ

क्या सितम है ख़ज़ाँ ज़दा दिल से
आरजूओं के फूल चुनता हूँ

मैं हूँ इस दौर का सियासत दान
सौ मसायल के जाल बुनता हूँ

इतनी फुर्सत कहाँ मगर फिर भी
अपने मतलब की बात सुनता हूँ

ज़ख़्म दिल के जो छेड़ जाते हैं
ऐसे नग़्मों पे सर भी धुनता हूँ

गुलसिताँ पर न कोई हर्फ़ आए
ख़ाली दामन में ख़ार चुनता हूँ

मैं नई ज़िन्दगी का सौदागर
सिर्फ़ रंगीन ख़्वाब बुनता हूँ

इन्क़लाब आए या न आए 'अर्श'
उस के क़दमों की चाप सुनता हूँ

ज़िन्दगी तूने दिखाए है ये मन्ज़र क्या-क्या
हम पे अपनों ही ने बरसाए हैं पत्थर क्या-क्या

ग़म-ए-दौराँ से फ़राग़त[1] ही नहीं थी हम को
वरना छलके हैं तिरी याद के साग़र क्या-क्या

ऐसा लगता है कि बरसों की शनासाई[2] है
हादसे देखते हैं हम को पलट कर क्या-क्या

उनके जलवों में हैं मसरूफ़ निगाहें लेकिन
दिल ने खोले हैं शिकायात के दफ़्तर क्या-क्या

अब निगाहों में है दिन-रात उन्हीं का पैकर
और भी फैल गए हैं वो सिमट कर क्या-क्या

शौक़ पाबन्द रहा उसके इशारे का मगर
दिल को घेरे रहे ख़दशात के लश्कर क्या-क्या

'अर्श' चेहरे तो बज़ाहिर है सकूँ का मज़हर[3]
और महशर हैं बपा जिस्म के अन्दर क्या-क्या

1. फ़ुर्सत 2. जान–पहचान 3. इज़हार

हर घड़ी पेश है सफ़र मुझको
शाम क्या और क्या सहर मुझको

मैं बिखर जाऊँगा फ़ज़ाओं में
अपनी आँखों में जज़्ब कर मुझको

मेरी हर बात से गुरेज[1] उसे
उसकी हर बात मोअतबर मुझको

अपनी कश्ती का नाख़ुदा हूँ मैं
मौज-ए-तूफ़ाँ से क्या ख़तर मुझको

कर गई जो मुझे नज़र अन्दाज़
याद आती है वो नज़र मुझको

फ़िक्र-ए-फ़र्दा[2] है जादा-ए-मंज़िल[3]
याद-ए-माज़ी है रहगुज़र मुझको

बे-नियाज़ाना सी नज़र उसकी
कर गई ख़ुद से बे-ख़बर मुझको

मैं कि ख़ाना-ब-दोश हूँ कब से
कौन समझेगा मोअतबर मुझको

1. दूर रहना 2. आने वाले कल की फ़िक्र 3. मन्ज़िल का रास्त

अपनी दुनिया में खो गया हूँ मैं
तेरी दुनिया की क्या ख़बर मुझको

ज़िन्दगी मुझ से क्या बसर होती
ज़िन्दगी ने किया बसर मुझको

दास्ताँ बन के फैल जाऊँगा
वक़्त कर देगा मुन्तिशर मुझको

मुझ में कोई नहीं है बात ऐसी
कौन चाहेगा टूट कर मुझको

लब तक आई न आरज़ू दिल की
रह गया कोई सोच कर मुझको

ख़ुद से मिलने की आरज़ू ऐ 'अर्श'
कर गई कितनी दर-ब-दर मुझको

हर मुसीबत को दर गुज़र करना
ज़िन्दगी इस तरह बसर करना

उन निगाहों में ये भी है ऐजाज़
दिल की दुनिया को मुन्तशर करना

वो समझता है हर इशारे को
बात जो भी हो मुख़्तसर करना

जो तिरी आरज़ू में जीते हैं
उन ग़रीबों पे भी नज़र करना

ज़िन्दगी को अगर समझना है
झोंपड़ों में इसे बसर करना

मेरी बातें अगर पसन्द नहीं
मेरी बातों को दर गुज़र करना

लोग कहते हैं बा-ख़बर है तू
मुझ को मेरी भी कुछ ख़बर करना

हादिसों से गुज़रना है जैसे
बर्फ़ की चोटियों को सर करना

लौ लगाई है उस से तो ऐ 'अर्श'
इन्तिज़ार उस का उम्र भर करना

सैंकड़ों ग़म थे मगर राहत का इक पहलू भी था
यास[1] के ज़ुल्मत-कदे में आस का जुगनू भी था

ज़िन्दगी में सौ तरह तूने नवाज़ा है मुझे
ये भी क्या कम है कि मेरी ज़िन्दगी में तू भी था

दर्द का हद से गुज़रना है सकून-ए-ज़िन्दगी
यानि हर तख़रीब[2] में तामीर का पहलू भी था

मिलने वाले तो लबों की मुस्कुराहट पर मिटे
लेकिन उस की नर्म सी पलकों पे इक आँसू भी था

इतनी वीरानी पे भी इस में थे हंगामे कई
दिल के सहरा में किसी की याद का आहू[3] भी था

बहस का मरकज़ थे उसके साथ उसके ख़द्द-ओ-ख़ाल[4]
गुलसिताँ की दास्ताँ में ज़िक्र-ए-रंग-ओ-बू भी था

देखता हूँ आज मै तनहा खड़ा हूँ राह में
याद आता है कि मेरी ज़िन्दगी में तू भी था

हर नज़र थी इज़्तिराब-ओ-कर्ब का दफ़्तर लिये
उन की गहरी ख़ामुशी में बात का पहलू भी था

'अर्श' उस की हर अदा थी नित नए तेवर लिए
उस की इक-इक बात में बँगाल का जादू भी था

1. मायूसी 2. तोड़–फोड़ 3. हिरन 4. नैन–नक़्श

जहाँ की भीड़ में क्या-क्या नहीं है
मगर इस में कोई तुझ सा नहीं है

ये लगता है वो है नाराज़ शायद
कई दिन से उसे देखा नहीं है

मिरी साँसों में है ख़ुशबू की सूरत
वो मुझ से दूर है ऐसा नहीं है

नज़र के रू-ब-रू मन्ज़र है जो भी
वो ख़ुद है उस का ये साया नहीं है

किसी की याद वाबस्ता है इस से
किसी लम्हा भी दिल तनहा नहीं है

सरूर-ए-जाविदाँ[1] है ज़िन्दगी में
मुहब्बत दर्द का सहरा नहीं है

हज़ारों आरज़ूओं का है मस्कन[2]
ये दिल काग़ज़ का इक टुकड़ा नहीं है

करूँ क्या तजज़िया[3] अहल-ए-जहाँ का
कि मैंने ख़ुद को भी परखा नहीं है

कहाँ ढूँढूँ उसे ऐ 'अर्श' जा कर
कहीं भी उसका नक़्श-ए-पा[4] नहीं है

1. हमेशा रहने वाला नशा 2. ठिकाना 3. इम्तिहान 4. पाँवों के निशान

मिरी हयात में सदियों की प्यास रहने दो
नज़र के सामने ख़ाली गिलास रहने दो

किसी सबील[1] से तुम अपने पास रहने दो
मिरे लबों पे कोई इल्तिमास[2] रहने दो

यही तो ज़िन्दगी के इरतिक़ा[3] की हैं बुनियाद
हक़ीक़तों को कभी बे-लिबास रहने दो

उदास लम्हों में ये ज़िन्दगी सँवरती है
न गुनगुनाओ फ़ज़ा को उदास रहने दो

मैं ज़िन्दगी से ज़ियादा अज़ीज़ रखूँगा
अता किये हैं जो ग़म मेरे पास रहने दो

हम एक दूसरे के हाल में शरीक रहें
तुम अपने साथ मुझे भी उदास रहने दो

कहीं न तन्ज़ करें तुम पे आइन्दा नस्लें
फ़क़ीर-ए-शहर के तन पर लिबास रहने दो

समझ में आ न सकेगा कभी मिज़ाज इनका
ये मेरे ग़म हैं इन्हें मेरे पास रहने दो

वो ज़िन्दगी के किसी मोड़ पर मिलेगा 'अर्श'
दिल-ए-शिकस्ता[4] में इतनी तो आस रहने दो

1. तरीक़ा 2. विनती 3. तरक्की 4. टूटा हुआ दिल

दिल-ए-हज़ीं[1] में खिले दूर-दूर आस के फूल
किसी की मोहनी बातें है या कपास के फूल

ये ज़िन्दगी का मधुबन है इस को क्या कहिये
कहीं हैं यास के काँटे कहीं है आस के फूल

महक उठा है मिरी ज़िन्दगी का हर लम्हा
कभी जो रूह में उतरे तिरे लिबास के फूल

समझ के तोहफ़ा-ए-दरवेश कर क़बूल उन्हें
मिरे हर एक सुख़न में है इल्तिमास[2] के फूल

मुझे गिला तो नहीं तुझ पे हर्फ़ आयेगा
कि तूने भी दिये दामन में सिर्फ़ यास के फूल

हम अहल-ए-दिल थे लगाया उन्हें भी आँखों से
कहीं थे ख़ौफ़ के काँटे कहीं हरास के फूल

बदन की आबरू इन से है जानते हैं सभी
मगर पसन्द किसी को नहीं कपास के फूल

वो हो सके न कभी रू-ब-रू हक़ायक़ के
जो ज़हन-ओ-दिल में सजाते रहे क़यास[3] के फूल

ये ज़िन्दगी किसी बीमार का है बिस्तर 'अर्श'
जिधर भी देखिये बिखरे हुए है यास के फूल

1. उदास दिल 2. विनती 3. अन्दाज़े

कौन सा वो ज़ख़्म-ए-दिल था जो तर-ओ-ताज़ा न था
ज़िन्दगी में इतने ग़म थे जिन का अन्दाज़ा न था

हम निकल सकते भी तो क्योंकर हिसार-ए-ज़ात[1] से
सिर्फ़ दीवारें ही दीवारें थीं दरवाज़ा न था

उस की आँखों से नुमायाँ थी मुहब्बत की चमक
उस के चेहरे पर नई तहज़ीब का ग़ाज़ा[2] न था

इतनी शिद्दत से कभी आया न था उस का ख़्याल
ज़ख़्म-ए-दिल पहले कभी इतना तर-ओ-ताज़ा न था

दूर कर देगा ज़माने से मुझे मेरा ख़ुलूस
मुझ को अपनी इस सलाहिय्यत[3] का अन्दाज़ा न था

उस की हर इक सोच में है इक मुसल्सल इन्तिशार
इस तरह बिखरा हुआ इस दिल का शीराज़ा न था

'अर्श' उन की झील सी आँखों का इस में क्या क़ुसूर
डूबने वालों को गहराई का अन्दाज़ा न था

1. चक्रव्यूह 2. पावडर 3. ख़ूबी

जब दिल को टटोलोगे वफ़ायें भी मिलेंगी
इस दश्त में गुमगश्ता सदायें भी मिलेंगी

तुम फूल से नाज़ुक हो झुलस जाओगे यकसर
दुनिया है यहाँ गर्म हवायें भी मिलेंगी

इख़्लास बना देगा हमें अपना ही दुश्मन
क्या इल्म था बे-जुर्म सज़ायें भी मिलेंगी

सिर्फ़ उन पे तग़ाफ़ुल का तो इल्ज़ाम ग़लत है
सोचोगे तो कुछ अपनी ख़तायें भी मिलेंगी

ख़ामोश रहेंगे तो ज़मीर अपना घुटेगा
हक़ बात पे संगीन सज़ायें भी मिलेंगी

शहरों की नफ़ासत पे न जा देखने वाले
इन में तुझे मसमूम[1] हवायें भी मिलेंगी

आलाम को हरगिज़ न हरीफ़[2] अपना समझ 'अर्श'
आलाम में जीने की अदायें भी मिलेंगी

1. ज़हर से भरी हुई 2. दुश्मन

क्या मस्ती-ए-सहबा[1] है उन झील सी आँखों में
इक कैफ़ का दरिया है उन झील सी आँखों में

क्या कहिये कि क्या क्या है उन झील सी आँखों
म
इक और ही दुनिया है उन झील सी आँखों में

खिलते हैं कंवल जिस में अहसास-ए-मुहब्बत के
वो शहर-ए-तमन्ना है उन झील सी आँखों में

उन नर्म सी पलकों पर बिखरी हुई मस्ती सी
हर ख़्वाब नशीला है उन झील सी आँखों में

कुछ कहिए मगर उस की तफ़्सीर[2] नहीं होती
इक ऐसा भी सपना है उन झील सी आँखों में

फिर अपनी ख़बर कोई उस को न मिली हरगिज़
जिस ने कभी झाँका है उन झील सी आँखों में

जैसे किसी वादी में पौ फटने का मन्ज़र हो
यूँ रंग-ए-तमन्ना है उन झील सी आँखों में

अब दिल के सफ़ीने का ऐ 'अर्श' ख़ुदा हाफ़िज़
जो मौज है दरिया है उन झील सी आँखों में

1. **शराब की मस्ती** 2. **तशरीह, समझना अच्छी तरह**

तश्नगी में है सलूक-ए-अहल-ए-मयख़ाना अलग
हम पे तन्ज़न मुस्कुरा देता है पैमाना अलग

एक साज़िश थी कि मयख़्वारों में सहबा[1] बट गई
मैं ये समझा बज़्म में है मेरा पैमाना अलग

वो तग़ाफ़ुल[2] पर है मायल हम वफ़ा पर हैं फ़िदा
दास्ताँ उन की अलग है अपना अफ़्साना अलग

इम्तियाज़-ए-मज़हब-ओ-मिल्लत[3] जियाँ पैदा हुआ
उस जगह से हो गई है राह-ए-मैख़ाना अलग

जाँ निसारान-ए-वफ़ा[4] का क्या यही अन्जाम है!
एक गोशे में पड़ी है ख़ाक-ए-परवाना अलग

जब भी दुहरायेगी दुनिया दास्ताँ इस दौर की
सबके अफ़्सानों से होगा अपना अफ़्साना अलग

अन्जुमन में ढूँढती है वो निगाह-ए-मयफ़रोश[5]
और हम बैठे हुए है बे-नियाज़ाना अलग

अहल-ए-दुनिया गो सर आँखों पर बिठाते हैं इसे
अहल-ए-दुनिया से है फिर भी तेरा दीवाना अलग

इब्तिदा से एक अफ़्साना महब्बत का है 'अर्श'
हाँ मगर हर बार है उन्वान-ए-अफ़्साना अलग

1. शराब 2. ग़फ़लत 3. मज़हब–ओ–फ़िरक़ा का फ़र्क़
4. वफ़ा पर मिटने वाला 5. जिस नज़र से मस्ती छलकती हो

क़ौल के इक़रार के पाबन्द लोग
अब कहाँ दुनिया में ग़ैरतमन्द[1] लोग

सच बना देते हैं ऐसे झूट को
खाते हैं ईमान की सौगन्द लोग

मुस्कुराते है जो पेश-ए-दार[2] भी
अब भी हैं दुनिया में ऐसे चन्द लोग

हक़ परस्ती से है सिर्फ़ इन को गुरेज़
वरना हर मज़हब के है पाबन्द लोग

जिन से सारा मयकदा बदनाम है
पीने वालों में हैं चन्द लोग

ख़ून-ए-नाहक़[3] देखते है सुब्ह-ओ-शाम
फिर भी कर लेते हैं आँखें बन्द लोग

हर ज़रूरत पर है पहरा ज़ब्त का
कितने बेबस हैं ज़रूरतमन्द लोग

अब ख़िरद की गुत्थियाँ हैं और हम
कर गये रस्म-ए-जनूँ को बन्द लोग

'अर्श' साहब वो ज़माने अब कहाँ
जब थे अपने क़ौल के पाबन्द लोग

1. इज़्ज़त वाले 2. फाँसी पर 3. ग़रीबों का ख़ून

नूर-अफ़्शाँ[1] है वो ज़ुल्मत[2] में उजालों की तरह
हमने पूजा है जिसे दिल से शिवालों की तरह

ख़ून-ए-उम्मीद हुआ, ख़ून-ए-तमन्ना गाहे
दिल छलकता ही रहा मय के प्यालों की तरह

ज़िन्दगी! तेरे तग़ाफ़ुल[3] की भी हद है कोई
इस क़दर नाज़ न कर ज़ुहरा-जमालों[4] की तरह

जब फ़रामोश करेंगे हमें दुनिया वाले
और उभर आयेंगे हम दिल में ख़्यालों की तरह

हादसा ख़ास हो बन जाता है ये पत्थर भी
दिल मगर नर्म भी है रूई के गालों की तरह

दिल तो क्या चीज़ है हम रूह में उतरे होते
तुम ने चाहा ही नहीं चाहने वालों की तरह

दश्त-ए-गुरबत[5] में जो आई है कभी याद-ए-वतन
फूट के रोये हैं हम पाँवों के छालों की तरह

'अर्श' बेबाकी-ओ-हक़गोई है मज़हब अपना
हम न बदलेंगे कभी वक़्त की चालों की तरह

1. रौशनी फैलाना 2. अन्धेरा 3. मुँह मोड़ना 4. ख़ूबसूरत लोग
5. विदेश

मुद्दत से न यादों की कोई शम्अ जली है
दिल है कि किसी शहर की वीरान गली है

वो दीद[1] से महरूम हैं जो अहल-ए-नज़र हैं
उस बज़्म में क्या कहिये अजब रस्म चली है

इक आँच भी सह सकती नहीं आतिश-ए-ग़म[2] की
ये ज़िन्दगी है या कोई नाज़ुक सी कली है

दिल में है ज़िया बार[3] तिरा दाग़-ए-तमन्ना
सद शुक्र कि महफ़िल में कोई शम्अ जली है

क्या जानिये क्या गुज़री है फिर दश्त-ए-तलब[4] में
कुछ दूर मिरे साथ तिरी याद चली है

आँखें हैं कि मस्ती के छलकते हुए साग़र
नाज़ुक से वो लब हैं शगुफ़्ता सी कली है

ख़ामोशी से अब देखिये अन्जाम हो जो 'अर्श'
तूफ़ाँ का जिधर रुख़ है उधर नाव चली है

1. दर्शन 2. ग़म की आग की 3. रौशनी बिखेर रहा है
4. आरज़ू के मैदान में

आज के दौर की ज़ुल्मत से निकालो मुझ को
और तरसाओ न फ़र्दा के उजालो मुझ को

तुम से बिछड़ूँ तो न जीने की कोई शक्ल रहे
इतना चाहो न मिरे चाहने वालो मुझ को

अपनी ही ज़ात में गुम हूँ मैं बड़ी मुद्दत से
इन ख़लाओं[1] से किसी तौर निकालो मुझ को

एक दरवेश हूँ दिन रात दुआयें दूँगा
दिल की उजड़ी हुई बस्ती में बसा लो मुझ को

तुम जो छू लोगे तो पड़ जायेगी क़ीमत मेरी
गीली मट्टी हूँ खिलौना ही बना लो मुझ को

उम्र भर तुम से हुई हो न अगर कोई ख़ता
तुम को ये हक़ है कि नेज़ों पे उछालो मुझ को

'अर्श' उस चश्म-ए-फ़सूँ[2] साज़ से ये कौन
क ह `

लड़खड़ा जाऊँगा महफ़िल में सँभालो मुझ को

1. ख़ाली जगह 2. मस्ती पैदा करने वाली आँख

ज़माने के हर इक अन्दाज़ को पहचान लेते हैं
हक़ीक़त जानने वाले हक़ीक़त जान लेते हैं

तबीअत कौन से आलम में पहचान लेते हैं
छुपायें लाख वो हम हाल दिल का जान लेते हैं

कली हो, फूल हो, शबनम हो, ज़र्रा हो, सितारा हो
नज़र वाले तुझे हर रंग में पहचान लेते हैं

फ़क़त इक दिल बढ़ाने को फ़क़त इक बात रखने को
कभी अहल-ए-जनूँ[1] अहल-ए-ख़िरद[2] की मान लेते हैं

किसी सूरत भी हो ज़ाहिर मगर पहचानने वाले
तिरे क़दमों की आहट से तुझे पहचान लेते हैं

फिर उस के वास्ते ये जान भी जाए तो क्या ग़म है
जिसे इक बार हम दुनिया में अपना जान लेते हैं

सुना था 'अर्श' सहबाई बहुत मग़रूर हैं लेकिन
जो देखा तो ये हज़रत हर किसी की मान लेते हैं

दीवाने 2. अक़्लमन्द लोग

सर से पा तक हसीन लगते हो
तुम ग़ज़ल की ज़मीन लगते हो

मेरे दिल का यक़ीन लगते हो
इस लिये भी हसीन लगते हो

ये अना की करिश्मा साज़ी है
आस्माँ हो ज़मीन लगते हो

साज़िशों में कोई जवाब नहीं
इन्तिहा के ज़हीन लगते हो

दिल ख़लूस-ओ-वफ़ा से ख़ाली है
कोई बन्जर ज़मीन लगते हो

काश सीरत भी हो हसीं इतनी
जिस क़दर तुम हसीन लगते हो

उस ने जितने भी बुत तराशे हैं
उन में तुम बेहतरीन लगते हो

इस का कोई सबूत भी हो 'अर्श'
कैसे कह दें ज़हीन लगते हो

मसर्रत कहाँ किन दुकानों में है
ये हीरा फ़क़त ग़म की कानों में है

जो मन्सूब था दुश्मनों से कभी
वो अन्दाज़ अब मेहरबानों में है

मुझे काबा-ओ-दैर से ले चलो
बड़ा शोर इन कारख़ानों में है

जिसे ज़िन्दगी का सकूँ कह सकें
वो मोती वफ़ा के ख़ज़ानों में है

मिरी ज़ात से जिन को निस्बत रही
तिरा ज़िक्र भी उन फ़सानों में है

कभी तू मिरे साथ रह कर तो देख
बड़ा लुत्फ़ कच्चे मकानों में है

इसे डूब कर ग़म में महसूस कर
मसर्रत जो ग़म के तरानों में है

हर इक शय से बरतर है तेरा ज़मीर
अगर ये तिरे पासबानों में है

न ज़र में मिलेगा न सहबा में 'अर्श'
वो नश्शा जो गन्दुम के दानों में है

दिल-ओ-निगाह में ऐसे उतारता है मुझे
वो अपने नाम से अक्सर पुकारता है मुझे

मैं एक शीशा-ए-नाजुक हूँ टूट जाऊँगा
हज़ार मरहलों से क्यों गुज़ारता है मुझे

ये चाहता है कि इस दौर पर करूँ तनक़ीद
वो शख़्स क़ब्र में ज़िन्दा उतारता है मुझे

क़दम जो रखता हूँ मैं मस्लिहत[1] की वादी में
मिरा ज़मीर बराबर पुकारता है मुझे

बिखेर देगी मुझे कल हवा ज़माने की
तू आज किस लिये इतना सँवारता है मुझे

बिगड़ता जाता है कुछ और नाख़ुदा का मिज़ाज
जहाँ जहाँ भी तलातुम उभारता है मुझे

ग़म-ए-दवाम से हासिल है ज़िन्दगी को फ़रोग़[2]
ग़म-ए-दवाम ही अक्सर सँवारता है मुझे

जनम-जनम से मैं जिस के लिए भटकता हूँ
कोई तो है जो मुसल्सल पुकारता है मुझे

ये देखना है कि तदबीर के बग़ैर ऐ 'अर्श'
मिरा नसीब कहाँ तक सँवारता है मुझे

1. अपनी ग़रज़ 2. तरक़्क़ी

जिस ख़ूबी-ए-किरदार पे मिट जाते हैं हम लोग
उस ख़ूबी-ए-किरदार के दुनिया में हैं कम लोग

हम ग़ौर से दुनिया का चलन देख रहे हैं
दुनिया ये समझती है कि ख़ामोश है हम लोग

अफ़साना बना कर भी बयाँ हो नहीं सकती
वो बात जो कह जाते है बा-दीदा-ए-नम[1] लोग

इस वास्ते मयख़ाने की ताज़ीम है लाज़िम
कुछ देर को मिल बैठते हैं इस में बहम लोग

चलते हैं ज़रा हट के ज़माने की रविश से
ये ठीक कहा आप ने दीवाने हैं हम लोग

अरज़ाँ भी है मक़बूल भी ये जिन्स जहाँ में
हर बात पर ईमान की खाते हैं क़सम लोग

ऐ गर्दिश-ए-अय्याम तुझे इल्म हो शायद
आफ़ात से कुछ और सँवर जाते हैं हम लोग

वो ग़म भी मुहब्बत में परस्तिश के हैं क़ाबिल[2]
दे जाते हैं जो दिल को ब-आदाज़-ए-करम[3] लोग

किस नाम से ऐ 'अर्श' उन्हें याद करें हम
इख़्लास के पर्दे में जो करते हैं सितम लोग

1. आँसुओं से भरी आँखें 2. पूजने के क़ाबिल 3. मेहरबानी के नाम पर

तुम करम की निगाह में रखना
मुझ को अपनी पनाह में रखना

देखने वाले लड़खड़ा जायें
इतनी मस्ती निगाह में रखना

हर क़दम उस की राह में उट्ठे
हर क़दम उस की राह में रखना

अपनी रहमत का वास्ता तुझ को
कुछ कशिश हर गुनाह में रखना

इस में आसानियाँ भी हों लेकिन
मुश्किलों को भी राह में रखना

ये गुज़ारिश है हर सितम शामिल
मेरे हाल-ए-तबाह में रखना

ज़िन्दगी के लिए कशिश कोई
हर ग़म-ए-बेपनाह में रखना

उस पे पूरा उतरना ख़ुद भी तुम
शर्त जो भी निबाह में रखना

क्या ज़रूरी है हर मसर्रत को
आँसुओं की पनाह में रखना

देखना मस्लिहत का दौर है ये
इस की बातें निगाह में रखना

कुछ उसे दर्द-ए-दिल मुयस्सर हो
कुछ असर मेरी आह में रखना

इल्तिजा है कि ज़िन्दगी मेरी
हादिसों की पनाह में रखना

'अर्श जो आँधियों में जलते हैं
उन चराग़ों को राह में रखना

सर-ब-सर मैं ग़मों की पनाहों में था
जो भी मन्ज़र था मेरी निगाहों में था

फिर भी दार-ओ-रसन से नवाज़ा गया
जानता हूँ कि मैं बे-गुनाहों में था

इस ने चाहा न मैं साँस तक ले सकूँ
ये ज़माना मिरे ख़ैर-ख़्वाहों में था

हक़ तो ये है कि इस ज़िन्दगी का मज़ा
कुछ सवाबों में था कुछ गुनाहों में था

मेरे दिल पर मुसल्सल जो छाया रहा
ये तिलिस्म[1] उसकी काफ़िर निगाहों में था

दूरियाँ अस्ल में कुछ असूलों की थीं
वरना क्या फ़ासला अपनी राहों में था

हर घड़ी उस का चेहरा रहा रू-ब-रू
वो कि तहलील मेरी निगाहों में था

'अर्श' उस को नहीं था ये अहसास तक
मुन्तिज़र कब से मैं उस की राहों में था

1. जादू

वो हसीं नक़्श वो सादा सी तबीअत उसकी
आज भी याद है मासूम सी सूरत उसकी

कर गई और भी तनहा मुझे कुर्बत उसकी
रास आई न किसी तौर महब्बत उसकी

उसकी हर बात में शामिल है सियासत उसकी
उसकी सूरत से कहाँ मिलती है सीरत उसकी

उसकी आँखों में नमी देख के अहसास हुआ
अब भी बाक़ी है मिरी ज़ात में रग़बत[1] उसकी

आज हर शख़्स का वो हाशिया बरदार सही
देखना जाग पड़ेगी कभी ग़ैरत उसकी

ये अलग बात नहीं उस की तवज्जह हम पर
हम कि हर हाल में करते है इबादत उसकी

उम्र भर हम पे रहा उसके सितम का साया
हम फ़रामोश न कर पायेंगे अज़्मत उसकी

ये भी मालूम नहीं उस से कहाँ बिछड़े थे
याद आती है हर इक मोड़ पे सूरत उसकी

'अर्श' किस हाल में हैं कौन ये पूछे उस से
कुछ दिनों से है फ़सुर्दा सी तबीअत उसकी

1. दिलचस्पी

कभी इधर भी फेरा जोगी
क्या बिगड़ेगा तेरा जोगी

तन, मन, आँखें, सपने साँसें
सब तेरे क्या मेरा जोगी

अब अक्सर कम कम मिलते हैं
बदल लिया क्या डेरा जोगी

इतनी बात बताते जाना
फिर कब होगा फेरा जोगी

क्या जीवन भर तोड़ सकोगे
आशाओं का घेरा जोगी

दूर है मुझ से मेरी मंज़िल
दूर है मुझ से मेरा जोगी

जनम जनम की प्यास बुझेगी
बस इक रैन बसेरा जोगी

मेरा तन मन रंग दिया है
कैसा रंग बिखेरा जोगी

तुम तो सब कुछ त्याग चुके हो
फिर क्यों मेरा तेरा जोगी

दिल को भला तो लगता होगा
दो नैनों का घेरा जोगी

क्या ये दुख की रैन कटेगी
होगा कभी सवेरा जोगी

तुम से उजाला था इस दिल में
अब है घोर अन्धेरा जोगी

'अर्श' की बातें करते हो तुम
कुटिया में है बसेरा जोगी

बार-ए-ख़ातिर है ये मन्ज़र देखना
ख़्वाब में उजड़े हुए घर देखना

हाल से तुम को अगर फ़ुर्सत मिले
अपने माज़ी को भी मुड़कर देखना

ख़ुर-ब-ख़ुद मैं मुश्तहर हो जाऊँगा
तुम मिरी जानिब बराबर देखना

सामने जिन के कोई मंज़िल न हो
ऐसे रस्तो पर भी चल कर देखना

जो दर-ओ-दीवार से हो बे-नियाज़
शहर में ऐसा कोई घर देखना

दूसरों पर पेशतर तनक़ीद से
झाँक कर ख़ुद अपने अन्दर देखना

गो मुनासिब है बहुत हक़ की सदा
आ न जाए कोई पत्थर देखना

हम से भी शायद कोई पहचान हो
इस तरफ़ भी बन्दा-परवर देखना

इस में फूलों की हँसी पाओगे तुम
जब मिले फ़ुर्सत मिरा घर देखना

हादिसे बिखरे हुए हैं राह में
लग न जाए कोई ठोकर देखना

कौन जाने इस की क्या ताबीर हो
ख़्वाब में गहरे समुन्दर देखना

मैं ये चाहूँ वो फले-फूले मगर
उस की ख़्वाहिश मुझ को बेघर देखना

'अर्श' कल जिन में महकते फूल थे
आज उन हाथों में पत्थर देखना

नज़र अन्दाज़ कर देती हैं वो ग़फ़लत-शिआर[1] आँखें
बिछी जाती हैं फिर भी राह में ये ख़ाकसार आँखें

रुलाती हैं लहू दिल को किसी की सोगवार आँखें
गुमाँ होता है जैसे हों मुहब्बत का मज़ार आँखें

अदा-ए-बे-नियाज़ी उस बुत-ए-काफ़िर[2] का शेवा है
सर-ए-महफ़िल मगर टकरा गई है बार-बार आँखें

न आया है न आयेगा कभी वो अपने वादे पर
न जाने किस तवक़्क़ो पर है महव-ए-इन्तिज़ार[3] आँखें

नदामत किस क़दर है जोर-ए-पैहम[4] की शिकायत पर
पशेमाँ कर गईं मुझ को किसी की शर्मसार आँखें

छुपाये से न हरगिज़ छुप सकेगा राज़-ए-दिल इन का
जो कैफ़िय्यत है दिल की कह रही हैं बेक़रार आँखें

किसी सहरा में जैसे कोई चश्मा फूट पड़ता है
वो याद आये तो रोयें इस तरह बे-इख़्तियार आँखें

बसा औक़ात अश्कों से मिली तस्कीन सी दिल को
बसा औक़ात हलका कर गईं दिल का गुबार आँखें

फ़राज़-ए-'अर्श'[5] से जैसे कोई उतरा कि बस उतरा
ख़ला में घूरती रहती हैं यूँ दीवाना-वार आँखें

1. जिन्हें परवाह न हो 2. बे-ईमान महबूब 3. इन्तिज़ार में खुली हुई
4. लगातार जुल्म 5. आसमाँ की बुलन्दी से

लाज़मन करनी पड़ी ताज़ीम-ए-पैमाना मुझे
इस मुहब्बत से मिले ज़िन्दान-ए-मैयख़ाना मुझे

जो हैं दीवाने समझते हैं वो फ़र्ज़ाना मुझे
और फ़र्ज़ाने हैं जो कहते हैं दीवाना मुझे

पहले अफ़्साने पे होता था हक़ीक़त का गुमाँ
अब हक़ीक़त भी नज़र आती है अफ़्साना मुझे

जानिब-ए-गुलशन[1] चला तो जाऊँ लेकिन क्या करूँ
देखाता है दीदा-ए-हसरत[2] से वीरना मुझे

मदभरी आँखों से पी कर हो गया हूँ मुत्मईन
याद है वरना अभी तक राह-ए-मयख़ाना मुझे

बेखुदी में दास्तान-ए-हुस्न लब पर आये क्या
जब नहीं है याद खुद अपना भी अफ़्साना मुझे

गो बज़ाहिर ख़ूब थी ताज़ीम-ए-मयख़ाना मगर
कह गए फिर भी बहुत कुछ जाम-ओ-पैमाना मुझे

हर सितम पर चुप हूँ लेकिन सोचता रहता हूँ
'अर्श'
ये मुसल्सल ख़ामुशी[3] कर दे न दीवाना मुझे

1. बाग़ की तरफ़ 2. हसरत भरी आँखों से 3. लगातार ख़ामोशी

ग़म में कभी राहत यूँ मदग़म[1] होती है
दिल हँसता है और आँख नम होती है

जिन लम्हों में आप की कुर्बत हासिल हो
उन लम्हों की उम्र बहुत कम होती है

जिन से हो बेदार कभी इन्साँ का ज़मीर
वो आवाज़ निहायत मद्धम होती है

ऐसी ज़ेबाइश[2] का आलम क्या कहिये
फूल के चेहरे पर जब शबनम होती है

जीने वाले उन हालात में जीते हैं
जिन में जीने की सूरत कम होती है

जो माहौल की तारीकी से ख़ायफ़[3] हों
ऐसे चिराग़ों की लौ मद्धम होती है

हम पर उस की चश्म-ए-तव्वजह[4] मायल हो
लेकिन इस की गुँजाइश कम होती है

ज़ख़्म छिलें तो और मज़ा देते हैं 'अर्श'
नश्तर में भी सूरत-ए-मरहम होती है

1. किसी चीज़ में मिल जाना 2. बनावट 3. डरना 4. मेहरबानी करने वाली आँखें

हर खुशी दर्द के साँचे में ढली हो जैसे
नब्ज़-ए-हस्ती है कि बस डूब चली हो जैसे

हादिसात-ए-ग़म-ओ-आलाम ने यूँ रौंद दिया
ज़िन्दगी एक शिकस्ता सी कली हो जैसे

दूर तक बिखरी हुई राख है अरमानों की
गर्दिश-ए-वक्त बहुत तेज़ चली हो जैसे

ज़िन्दगी बहर-ए-हवादिस[1] में रवाँ है पैहम
नाव तूफ़ाँ के सहारे पे चली हो जैसे

आप की याद है मेरे दिल-ए-बंरबाद में यूँ
किसी वीराने में इक शम्अ जली हो जैसे

अब न वो रंग है इसमें न वो खुशबू ऐ 'अर्श'
ज़िन्दगी एक फ़सुर्दा सी कली हो जैसे

1. हादिसात का समुन्दर

बस इतनी दास्तान-ए-मुख़्तसर[1] हूँ
मैं ख़ुद ही ज़ख़्म ख़ुद ही चारागर हूँ

परेशाँ ज़िन्दगी में इस क़दर हूँ
ये लगता है ख़्याल-ए-मुन्तशर[2] हूँ

ज़माना क्या है इस से बे-ख़बर हूँ
मुझे तस्लीम है मैं कम-नज़र हूँ

है इस से ज़िन्दगी में गहमा-गहमी[3]
मसायब का अज़ल से हम सफ़र हूँ

मैं हूँ तक़सीम कितने दायरों में
कभी शबनम, कभी बर्क़-ओ-शरर हूँ

ग़म-ए-अय्याम! पेश-ओ-पस[4] है कैसी
गुज़र भी जा मैं तेरी रहगुज़र हूँ

परे है 'अर्श' से परवाज़ मेरी
अगरचे तायर[5]-ए-बे-बाल-ओ-पर हूँ

1. मुख़्तसर कहानी 2. बिखरा हुआ ख़्याल 3. शोर, रौनक़ 4. सो
5. परिन्दा

बजा कि जाँफ़िज़ा[1] नग़्मों की आबशार भी है
हयात कर्ब-ए-मुसलसल[2] की जू-ए-बार[3] भी है

बहुत अज़ीज़ सही मन्ज़िल-ए-मुराद मुझे
मिरी नज़र में मगर राह का गुबार भी है

कभी कभी मुझे ख़ुद पर है शायबा[4] तेरा
कभी कभी मुझे ख़ुद अपना इन्तिज़ार भी है

लबों पे ज़ाहिरन है मुस्कुराहटों का हुजूम
मगर हक़ीक़तन ज़हनों में इन्तिशार[5] भी है

तिरे ख़्याल से आबाद है मिरी दुनिया
तिरा ख़्याल कभी सख़्त नागवार भी है

कभी सकून की वादी से है गुज़र दिल का
कभी ये मौज-ए-हवादिस से हमकिनार भी है

भटक के रह गये लफ़्ज़ों के बन में हम वरना
हर इक क़दम पे मआनी का लाला-ज़ार भी है

वो कैफ़ियत कि तिरा दिल है जिस से हम
अ ा ग . ा ` २ ा
वो कैफ़ियत तिरी आँखों से आशकार भी है

ये बात ठीक है ये इरतक़ा[6] का दौर है 'अर्श'
मगर ये दौर शिकस्ता सा इक मज़ार भी है

1. ऐसे नग़्मे जिन से सकून मिले 2. लगातार दर्द 3. छोटी नदी
4. शक 5. परेशानी 6. तरक़्क़ी

हलक़ा-ए-मौज-ओ-तलातुम में सफ़ीने की तरह
हम ज़माने में जिये जायेंगे जीने की तरह

नब्ज़-ए-दुनिया का तसलसुल है हमारे दम से
हम हैं दुनिया में धड़कते हुए सीने की तरह

अब जुदा हो नहीं सकती ये किसी सूरत भी
दिल में पैवस्त[1] है वो याद नगीने की तरह

बार-ए-आफ़ात से सौ बार लचक जाती है
ज़िन्दगी है किसी कम्ज़ोर से ज़ीने की तरह

हादिसा ये भी हुआ वक़्त के रुख़्सारों पर
बह गये हम किसी मुफ़्लिस के पसीने की तरह

कितनी हस्सास हैं आँखें मिरी बे-हाली पर
अश्क बरसाती हैं सावन के महीने की तरह

ग़म-ओ-आलाम के गिरदाब में दिल वाले भी
डगमगाते हैं शिकस्ता से सफ़ीने की तरह

सख़्त हैरत है वो हक़दार किसी शय के नहीं
जो यहाँ ख़ून बहाते हैं पसीने की तरह

हम सज़ावार हैं हर जोर के इस जुर्म में 'अर्श'
हम ने डाली है मुहब्बत के क़रीने की तरह

1. जड़ी हुई

कोई मस्कन न कोई घर मेरा
ग़ैर-महदूद[1] है सफ़र मेरा

मैं हूँ इक लफ़्ज़ और वो मानी
है तआरुफ़ ये मुख़्तसर मेरा

उस का हर क़ौल मुस्तनद[2] लेकिन
हर सुख़न ग़ैर-मोअतबर मेरा

क्या सितम है कि ख़ुश्क हैं आँखें
फिर भी दामन है तर-ब-तर मेरा

हादिसों ने इसे संवारा है
वरना वीरान था ये घर मेरा

मैं तिरी अज़्मतों का ज़ामिन[3] हूँ
ज़िन्दगी! एहतराम कर मेरा

मुझ को तन्हाई का नहीं एहसास
मेरा साया है हमसफ़र मेरा

मेरे दम से हैं तज़करे उस के
वो है मोहताज उम्र भर मेरा

शुक्रिया ऐ शऊर-ए-ख़ुद्दारी[4]
तूने झुकने दिया न सर मेरा

1. बग़ैर किसी हद के 2. माने जाने के क़ाबिल 3. ज़िम्मावार
4. ख़ुद्दारी की पहचान

आप की मुख़्तसर रफ़ाक़त में
ख़ूब तर कट गया सफ़र मेरा

मैंने चाहा है टूट कर तुझ को
ज़िन्दगी! ऐतबार कर मेरा

आप का ये करम कि याद किया
वरना क्या हक़ है आप पर मेरा

मैं हूँ दुनिया में रूह की सूरत
तय न होगा कभी सफ़र मेरा

जब गुज़र होगा तेरी बस्ती से
जायज़ा लेगी हर नज़र मेरा

मुझ को आई न मस्लहित बाज़ी
'अर्श' किस काम का हुनर मेरा

1. अपनी ग़रज़ पूरी करना

मुझ से हैं महव-ए-गुफ़्तगू[1] तन्हाईयाँ मिरी
देखे तो कोई अन्जुमन-आराईयाँ[2] मिरी

हैं अन्जुमन की शक्ल में तनहाईयाँ मिरी
मेरा वजूद बन गई परछाईयाँ मिरी

जब भी किया है मैंने कभी इन का हल तलाश
बढ़ती गई हैं और भी कठिनाईयाँ मिरी

जी चाहता है उस से मुलाक़ात को मगर
डरता हूँ वो न ले उड़े तनहाईयाँ मिरी

ज़ाहिर है इस से मैं उन्हें कितना अज़ीज़ हूँ
मुद्दत से साथ-साथ हैं रुसवाईयाँ मिरी

कुछ वो भी ज़िन्दगी में रहा मुझे से दूर-दूर
कुछ मुझ को रास आ गई तनहाईयाँ मिरी

मेरे लबों पे हर घड़ी हैं मुस्कुराहटें
हैराँ हैं मुझ को देख कर कठिनाईयाँ मिरी

दिल है कि उसकी याद से रहता है हम
किनार
कितनी सकून[3] बख़्श है तनहाईयाँ मिरी

मैं ढूँढता हूँ और वो आता नहीं नज़र
ऐ 'अर्श' खो गई कहाँ परछाईयाँ मिरी

1. बातचीत में मसरूफ़ 2. महफ़िल सजाना 3. चैन देने वाली

हर एक रंग में काटेंगे हम सज़ा ही सही
ये ज़िन्दगी किसी मुफ़लिस की बददुआ ही सही

सवाल ये है कि दार-ओ-रसन[1] का क्या होगा
नहीं है इस से ग़रज़ कोई बे-ख़ता ही सही

न इस को भूल कि मैंने तुझे किया तख़्लीक़[2]
ये और बात है तू वक़्त का ख़ुदा ही सही

यही बहुत है कि मुझ पर तिरी तवज्जह है
तिरी निगाह का अन्दाज़ दूसरा ही सही

कोई तो शक्ल हो जिस से ये ज़िन्दगी गुज़रे
नहीं कुछ और तो इक दर्द-ए-ला-दवा ही सही

ये देखना है कि कैसा हो नाख़ुदा का सलूक
मिज़ाज नाव का गिरदाब आशना[3] ही सही

वो मेरी रूह में तहलील[4] हो चुका है 'अर्श'
अगर वो मुझ से जुदा है चलो जुदा ही सही

1. फाँसी 2. बनाया 3. भँवर से वाक़िफ़ 4. घुल–मिल जाना

ये हादिसा किसी सूरत मिरे गुमाँ में न था
वो मीर-ए-कारवाँ ठहरा जो कारवाँ में न था

बहार आई तो दिल में हज़ार ज़ख़्म खिले
मगर ये रंग कभी मौसम-ए-ख़ज़ाँ में न था

न जाने किस की ये आवाज़ गूँजती थी मुदाम
मिरे सिवा तो कोई दूसरा मकाँ में न था

मिरी ही ज़ात से ये दास्ताँ मुरत्तब थी
मिरा ही ज़िक्र मुहब्बत की दास्ताँ में न था

बहुत ग़लत था कि हम इस को आशियाँ कहते
बराये नाम भी तिनका जब आशियाँ में न था

मिरे ख़्याल में होगा ये लफ़्ज़-ए-बे-मानी
ख़लूस नाम है जिस का वो इस जहाँ में न था

बहार-ए-गुन्चा-ओ-गुल पर नहीं था हक़ कोई
मैं अहल-ए-गुलसिताँ हो कर भी गुलसिताँ में न
था ।

तरस तरस गए ऐ 'अर्श' हम सितम के लिए
सकून-ए-ज़िन्दगी का लुत्फ़ बेकराँ में न था

1. गुन्चे और फूलों की बहार 2. कभी न ख़त्म होने वाला मज़ा

कोई सबूत तो अज़्मत का यूँ मुहय्या कर
मिरा वजूद इक क़तरा है इस को दरिया कर

मुझे ख़ुलूस से बढ़ कर नहीं है कुछ दरकार
मैं बिक रहा हूँ मिरी ज़िन्दगी का सौदा कर

रहे ख़्याल कि जी को न कोई रोग लगे
न बात बात पर संजीदगी से सोचा कर

हर एक शख़्स ज़माने में हक़ परस्त नहीं
हर एक शख़्स से हक़ बात पर न उलझा कर

मुझे भी इस का यक़ीं हो करिश्मा साज़[1] है तू
बिखर गया हूँ फ़ज़ाओं में मुझ को यकजा कर

हसीं फ़रेब है ये सिलसिला-ए-दैर-ओ-हरम
फ़क़त ख़लूस-ओ-अक़ीदत से खुद को सजदा
क र

खुलेंगे तुझ पे बहर हाल ज़िन्दगी के रमूज़[2]
खुद अपनी रूह की गहराईयों में झाँका कर

तआल्लुक़ात बड़ी चीज़ हैं मगर ऐ 'अर्श'
तआल्लुक़ात से पहले हर इक को परखा कर

1. जादू दिखाने वाला 2. भेद

हाल इन्सान का इस दौर में अबतर[1] ही सही
कल तो निखरेगी फ़ज़ा आज मकद्दर[2] ही सही

तशनगी दिल की मगर और बढ़ी जाती है
वो नज़र एक छलकता हुआ साग़र ही सही

फिर भी कमबख़्त के अन्दाज़ है कितने प्यारे
ज़िन्दगी दर्द का चुभता हुआ नश्तर ही सही

जब पड़े वास्ता खुलती है हक़ीक़त इस की
ज़ाहिरन आदमी इख़्लास का पैकर ही सही

हम जहाँ जायेंगे सौ महफ़िलें जम जायेंगी
वक़्त कट जायेगा गो तुझसे बिछड़कर ही सही

फिर भी इक रब्त-ए-निहाँ[3] है जो है क़ायम अब
त क
यानि हम ख़ार सही आप गुल-ए-तर ही सही

क्या ख़बर कब मुझे मिल जाये कोई आज़र[4] 'अर्श'
मुझ को तस्लीम कि मैं राह का पत्थर ही सही

1. बुरा 2. ख़राब 3. छुपा हुआ रिश्ता 4. जो बुत बनाता हो

किस क़दर दिलचस्प हैं ये रंग-ओ-बू के सिलसिले
आरज़ू के बाद ख़ून-ए-आरज़ू के सिलसिले

क्या बताऊँ उस निगाह-ए-हीला[1] जू के सिलसिले
ख़त्म होते ही नहीं है गुफ़्तगू के सिलसिले

उम्र भर इन्सान को मिलती नहीं फ़ुर्सत कभी
उम्र भर रहते हैं जारी जुस्तजू के सिलसिले

ज़र्रे-ज़र्रे से नुमायाँ है तिरी परछाईयाँ
ज़र्रे-ज़र्रे से हैं पैदा रंग-ओ-बू के सिलसिले

हर नज़र बेताबी-ए-जज़्बात[2] की तफ़्सीर[3] है
ख़ामुशी में भी हैं पिनहाँ गुफ़्तगू के सिलसिले

गर्दिशें-ए-सहबा के दम से है बहार-ए-ज़िन्दगी
फिर कहाँ ये रक़्स ये जाम-ओ-सबू के सिलसिले

ओस, कलियाँ, फूल, अन्जुम, कहकशाँ, महताब 'अर्श'
दूर तक फैले हुए है आरज़ू के सिलसिले

1. बहाने बनाने वाली नज़र 2. जज़्बात की बेक़रारी 3. बयान

हादसात-ए-दिल शिकन से क्या परेशानी मुझे
जब विरासत में मिली ग़म की फ़रावानी मुझे

मैं ही था गोया सर-ए-साहिल तलातुम-आशना
साथ अपने ले गई दरिया की तुग्यानी मुझे

क्या नज़र आया नहीं इस को जनूँ पेशा कोई
खैंचती है किस लिए सहरा की वीरानी मुझे.

मैं समझता था कि इख़्लास-ओ-वफ़ा है मोअतबर
लेकिन अपनी बात पर है अब पशेमानी मुझे

मुत्मईन हूँ मैं कि शहर-ए-आरज़ू भी लुट गया
खाये जाती है मगर अब दिल की वीरानी मुझे

मैं कभी मन्सूर की सूरत कभी सुक़रात हूँ
हक़ परस्ती ने किया दुनिया में लाफ़ानी मुझे

ज़िन्दगी की रहगुज़र में हादिसों के बावजूद
आप मेरे साथ हैं तो क्या परेशानी मुझे

ख़ार हो कर भी मुझे इक बरतरी हासिल है 'अर्श'
सौंप दी क़ुदरत ने फूलों की निगहबानी मुझे

1. जायदाद 2. ज़्यादा 3. साहिल पर 4. तूफ़ान को जानने वाला

अपना हर वादा बराबर तोड़ना
जो सितम भी हो वो मुझ पर तोड़ना

मैं तो पलकों पर बिठाऊँगा तुम्हें
तुम मिरे सीने पे पत्थर तोड़ना

याद आते हैं वो मन्ज़र रेत के
घर बनाना फिर बना कर तोड़ना

ज़िन्दगी का ये भी इक अन्दाज़ है
रात दिन सड़कों पे पत्थर तोड़ना

अज़्म पर है मुन्हसर मेरी उड़ान
जब तबीअत हो मेरे पर तोड़ना

कोई भी हसरत न इस दिल में रहे
कुछ जलाना और कुछ घर तोड़ना

उन की साँसों की महक हो जिस में जज़्ब
गुलसिताँ से वो गुल-ए-तर तोड़ना

आप की नज़रों में दोनों एक हैं
दिल सी शय या कोई पत्थर तोड़ना

मैं बनाता हूँ वफ़ाओं के जो 'अर्श'
शौक़ उन का है वो पैकर तोड़ना

1. चेहरा, शक्ल

ज़िन्दगी में मयकदे का एहतराम अपनी जगह
तल्ख़ियाँ अपनी जगह मीना-ओ-जाम अपनी जगह

जिन को है परवाज़ की धुन वो कभी रुकते नहीं
पुर कशिश है किस क़दर दाना-ओ-दाम अपनी जगह

ज़िन्दगी के मसअलों से इस क़दर फ़ुर्सत कहाँ
उस निगाह-ए-पुर-फ़सूँ[1] का एहतमाम अपनी जगह

हम कि इन दोनों की अज़मत से कभी मुनकर नहीं
राहतें अपनी जगह ग़म का मुक़ाम अपनी जगह

इख़्तिलाफ़ इस से हो कोई इस में कुछ हैरत नहीं मेरे
दिल में हर बशर का एहतराम अपनी जगह

ज़िन्दगी की दास्ताँ में फिर भी कितना रब्त[2] है
इब्तिदा अपनी जगह है इख़्तिताम[3] अपनी जगह

कर चुका तस्ख़ीर[4] इन्साँ गो ख़लाओं को मगर
आज भी क़ायम है कुदरत का निज़ाम अपनी जगह

साक़ी-ए-महफ़िल के हर इक फ़ैज़ से महरूम है
मुत्मईन है फिर भी कोई तशना-काम अपनी जगह

कुछ भी हो हम तो जनाब-ए- 'अर्श' के हैं मोअतक़िद
शख़्सियत अपनी जगह हुसन-कलाम अपनी जगह

1. जादू भरी आँखें 2. तअ़ल्लुक़ 3. अन्जाम 4. फ़तह

खुद-रौ[1] फूलों की सूरत जो खिलते हैं
ऐसे लोग ज़माने में कम मिलते हैं

भूलने पर भी वो याद आते है अक्सर
बन्द हवा है फिर भी पत्ते हिलते हैं

हम तुम जुदा-जुदा से रहते हैं लेकिन
इक मरकज़ पर सारे दरिया मिलते हैं

माज़ी की यादों से दिल को क्या हासिल
इन यादों से ज़ख़्म पुराने छिलते हैं

तुम भी अपने हुस्न में यकता हो लेकिन
हम से चाहने वाले भी कम मिलते हैं

और नुमायां होते हैं कुछ मिट कर हम
हम वो फूल हैं जो मुरझा कर खिलते हैं

तुम भी शौक़ से अपनी कोशिश कर
द े ख ा ा े
देखें दिल के ज़ख़्म कहाँ तक सिलते हैं

चन्दन की खुशबू सी आती है इन से
रंग तुम्हारे जिस्म पे सारे खिलते हैं

दीद के क़ाबिल होता है वो मन्ज़र 'अर्श'
सदियों बिछड़े जब आपस में मिलते हैं

1. अपने आप पैदा होने वाला

जीवन इक फेरा जोगी का
ये रैन बसेरा जोगी का

कितनी तस्कीन[1] का बायस है
वीरान सा डेरा जोगी का

मालूम नहीं काफ़ूर[2] हो कब
ये मन का अन्धेरा जोगी का

गलियों में अलख जगाने में
होता है सवेरा जोगी का

शहरों में पुजारी हैं इस के
पर्बत पर डेरा जोगी का

मन में रुसवाई का ख़दशा
आँखों में बसेरा जोगी का

कुछ देर को हम सुस्तायेंगे
कुछ दूर है डेरा जोगी का

ऐ 'अर्श' मुझे भी इल्म नहीं
क्या रब्त[3] है मेरा जोगी का

1. ख़ुशी 2. मिटना 3. रिश्ता

मुन्तशर है ज़हन भी दिल भी परेशानी में है
ज़िन्दगी है एक दरिया और तुग़ियानी में है

मेरी फ़ितरत देखिये खाता हूँ दानिस्ता फ़रेब
वो कहाँ दानाई में जो लुत्फ़ नादानी में है

बावजूद इस के हूँ हर इक मौज से सीना-सिपर[1]
नाव भी टूटी हुई दरिया भी तुग़ियानी में है

मैं किनारों का किसी सूरत नहीं अहसान मन्द
मैं हूँ काग़ज़ की वो नाव जिस का घर पानी में है

इसका जो मन्ज़र भी है वो है सरापा शाहकार
किस क़दर मसरूफ़ कुदरत रंग-अफ़शानी में है

फूल रहते हैं हमेशा तेज़ तर काँटों के साथ
ज़िन्दगी की हर ख़ुशी ग़म की निगहबानी में है

बढ़ गया मेरी नज़र में और भी उस का वक़ार
जब से सुनता हूँ वो अहसास-ए-पशेमानी में है

ये हक़ीक़त है बिखर कर रह गई है ज़िन्दगी
वक़्त ऐसा है कि हर कोई परेशानी में है

राहतें भी बे-तरह है दिल से हम आग़ोश 'अर्श'
फिर भी क़ायम इक तसलसुल[2] अश्क अफ़्शानी[3] में है

1. मुक़ाबला करना 2. सम्बन्ध 3. आँसू बहाना

दिल में अफ़्सुर्दगी सी रहती है
अब तबीअत बुझी सी रहती है

वो कि दिल में है हर घड़ी मौजूद
फिर भी उस की कमी सी रहती है

मैं भी अपनी वफ़ा पे नादिम[1] हूँ
वो नज़र भी झुकी सी रहती है

मौत से खेलते है दीवाने
फिर भी लब पर हँसी सी रहती है

उस को इक बार देखने के बाद
उम्र भर तश्नगी सी रहती है

कोई राहत भी हो मगर उस में
दर्द की चाशनी[2] सी रहती है

खुद से जब हम कलाम होता हूँ
एक महफ़िल जमी सी रहती है

याद आता नहीं है नाम उस का
दिल में सूरत भली सी रहती है

जब भी उस से हो गुफ़्तगू ऐ 'अर्श'
ज़हन में ताज़गी सी रहती है

1. शरमिन्दा 2. मिलावट

दिल की बस्ती से बहारों की अदा बन कर गुज़र
ये तमन्ना है कभी बाद-ए-सबा बन कर गुज़र

हर घड़ी अहसास में है इक गुबार-ए-तश्नगी
तुझसे मुमकिन हो अगर ऊदी घटा बन कर गुज़र

इक फ़ज़ा-ए-बेकराँ[1] में जज़्ब होना है तुझे
इब्तिदा बन कर गुज़र या इन्तिहा बन कर गुज़र

नफ़रतों की ज़ुल्मतें फैली हैं ता हद्द-ए-नज़र[2]
इन अन्धेरों से मुहब्बत की ज़िया[3] बन कर गुज़र

ज़िन्दगी बेरंग ख़ाके के सिवा कुछ भी नहीं
इस को भरने के लिए रंग-वफ़ा बन कर गुज़र

हादसों की धूप में हर शय झुलस कर रह गई
ग़म के सहराओं से राहत की घटा बन कर गुज़र

मेरा दावा है कि रास आ जायेगा ये तजरुबा
ज़िन्दगी में अपनी ख़ातिर बा-वफ़ा बन कर गुज़र

किस क़दर राहत फ़ज़ा होती है इस की हर कसक
जिस तरह मुमकिन हो दिल से ज़ख़्म सा बन कर गुज़र

'अर्श' संग-ए-मील होगा तेरा हर नक़्श-ए-क़दम
ज़िन्दगी से ज़िन्दगी का मुद्दआ बन कर गुज़र

1. दूर तक फैले हुए माहौल 2. नज़र की हद तक 3. रौशनी

इक उम्र जो रहे हैं दिल का क़रार बन कर
अब ज़हन में हैं यादों की आबशार बन कर

दिल का सकून बन कर दिल का क़रार बन कर
वो दिल में रह रहे हैं दिल का वक़ार बन कर

कुछ शायरों अदीबों का इश्तिहार बन कर
उर्दू ज़बान बिखरी है कारोबार बन कर

उस ने जो ग़म दिये हैं मुझ को अज़ीज़ तर हैं
बरसों रहे हैं मेरे ये राज़ दार[1] बन कर

हर राहगीर हम को हैरत से देखता है
दीवार पर हैं चस्पाँ हम इश्तिहार बन कर

उन के उसूल भी हैं उन का ज़मीर भी है
रहते हैं ज़िन्दगी में जो शाहकार बन कर

हम गुलसिताँ से बढ़ कर समझे थो ज़िन्दगी को
क्या कहिये रह गई है ये ख़ार ज़ार[2] बन कर

इस ज़िन्दगी में जिन की हर शय पे दस्तरस[3] थी
बिखरे हैं वो फ़ज़ा में गर्द-ओ-गुबार बन कर

ऐ 'अर्श' जब भी गुज़रे हैं दिल की वादियों से
वो छा गये हैं इन पर रंग-ए-बहार बन कर

1. भेद जानने वाले 2. काँटों का बन 3. इख़्तियार

इस का हर मन्ज़र सरापा क़हर है
ज़िन्दगी इक हादसों का शहर है

रोकने से ये कभी रुकता नहीं
वक़्त भी दरिया की कोई लहर है

इस पे इन्साँ का नहीं कुछ इख़्तियार
मुख़्तलिफ़ कितना निज़ाम-ए-दहर[1] है

साँस लेना भी बहुत मुश्किल हुआ
आज के माहौल में वो ज़हर है

ज़िन्दगी का कोई शोबा[2] लीजिए
हर तरफ़ बे-रह-रवी[3] की लहर है

देख कर खण्डरात अन्दाज़ा हुआ
दिल कोई सदियों पुराना शहर है

बात में लाज़म है तल्ख़ी से गुरेज़
दिल कि इक शाइस्तगी का शहर है

उन की यादों की तरन्नुम-रेज़ियाँ[4]
ज़िन्दगी इक नग़्मगी की लहर है

दूर तक है बे-हिसी की इक फ़सील[5]
'अर्श' जम्मू पत्थरों का शहर है

1. दुनिया का निज़ाम 2. भाग 3. ग़लत रास्ते पर चलना
4. तरन्नुम बिखेरना 5. दीवार

मुझ को मालूम है वो है मिरा अपना कितना
मैंने इस पर भी उसे टूट के चाहा कितना

मोअतरिज़[1] हैं मिरी हर बात पे दुनिया वाले
दुनिया वालों ने मगर मुझ को है समझा कितना

मुझ में जो ख़ूबियाँ थीं उन पे वो ख़ामोश रहे
कोई ख़ामी थी अगर उस को उछाला कितना

मुस्कुराते हुए चेहरों पे न जाना हरगिज़
कब कोई जानता है कौन है तनहा कितना

उस के जज़्बात में सौ रंग से तहलील[2] हूँ मैं
इस से ज़ाहिर है कि उसने मुझे चाहा कितना

सख़्त हैरत है कोई दे न सका उस का सुराग़[3]
दैर-ओ-काबा में भी हर शख़्स से पूछा कितना

मेरे होंटों का तबस्सुम[4] बड़ा खुश-रंग सही
इस में शामिल है मगर ख़ून-ए-तमन्ना कितना

दिल में ता-हद्द-ए-नज़र[5] आलम-ए-वीरानी है
देखाते-देखाते फैला है ये सहरा कितना

काश उस को कभी अहसास ये होता ऐ 'अर्श'
हो गया उस से बिछड़ कर कोई तनहा कितना

1. ऐतराज़ 2. मिल जाना 3. भेद 4. मुस्कुराहट
5. नज़र की हद तक

मिरे वफ़ाओं का मज़कूर[1] बार-बार न कर
ज़रा सी बात की ख़ातिर तू शर्मसार न कर

तिरी तलाश में सौ मरहलों से गुज़रा हूँ
दिल-ओ-निगाह को अब और बे-क़रार न कर

वफ़ा, ख़ुलूस, महब्बत हैं ज़िन्दगी की बिना
ये मशवरा है मिरा इन को संगसार न कर

तिरी हयात का फ़र्दा[2] से भी है इक रिश्ता
तू सिर्फ़ माज़ी के रिश्ते को उस्तवार न कर

वो बात क्या जो किसी की समझ में आ न सके
हर एक बात में इतना भी इख़्तिसार[3] न कर

रहे ख़्याल कि इस का चलन है जोर-ओ-वफ़ा[4]
वफ़ा के नाम पर दुनिया को शर्मसार न कर

जो इब्तिदा-ए-सफ़र में नहीं थे साथ तिरे
तू ऐसे लोगों का रस्ते में इन्तिज़ार न कर

सिला बहुत है यही मेरे फ़िक्र-ओ-फ़न का 'अर्श'
जो बा-कमाल है उन में मिरा शुमार न कर

1. ज़िक्र 2. आने वाला वक़्त 3. मुख़्तसर करना 4. ज़ुल्म

दो अगर मेरा हम-ख़्याल नहीं
फिर किसी बात का मलाल[1] नहीं

मैंने ख़ुद हादसों को दावत दी
ज़िन्दगी ये तेरा कमाल नहीं

कौन सी आँख जो नहीं है नम
कौन सा दिल जो पायमाल[2] नहीं

फ़न है दुनिया में ज़िन्दा-ओ-जावेद
वरना किस चीज़ को ज़वाल नहीं

उस नज़र में जवाब हैं कितने
मेरे लब पर कोई सवाल नहीं

किस घड़ी आप का नहीं मज़कूर
किस घड़ी आप का ख़्याल नहीं

सह लिए हम ने सैंकड़ों सदमे
दिल मगर फिर भी पायमाल नहीं

ज़िन्दगी गो हसीन है लेकिन
आप से फिर भी ख़द-ओ-ख़ाल नहीं

'अर्श' किस से करूँ मैं दिल की बात
कोई भी मेरा हम ख़्याल नहीं

1. अफ़सोस 2. कुचला हुआ

कभी न मिल सका ये आस्माँ ज़मीन के साथ
अगरचे आसताँ को रब्त है जबीन[1] के साथ

बने हुए हैं वो तस्वीर बे-यक़ीनी की
किये जो आप ने वादे बड़े यक़ीन के साथ

नहीं है आसमाँ की वुसअतों[2] से कोई ग़रज़
जनम-जनम से है रिश्ता मिरा ज़मीन के साथ

कटी है मस्लिहत[3] कोशी में तेरी उम्र तमाम
हैं दाग़ सजदों के कितने तिरी जबीन के साथ

मिरे वतन में ज़हानत[4] की कोई क़दर नहीं
ये बात आज भी कहता हूँ मैं यक़ीन के साथ

सुपुर्द-ए-ख़ाक[5] हो वो या सुपुर्द-ए-आतिश[6]
ह ा
बशर की ज़िन्दगी वाबस्ता है ज़मीन के साथ

जनाब 'अर्श' के अन्दाज़-ए-गुफ़्तगू के निसार
वो बात करते हैं जो भी बड़े यक़ीन के साथ

1. माथा 2. फैलाव 3. 4. क़ाबलियत 5. मिट्टी के सुपुर्द
6. आग के सुपुर्द

जब से वो बदगुमाँ सा रहता है
दिल पे बार-ए-गिराँ[1] सा रहता है

इक न इक इम्तिहाँ सा रहता है
फिर भी दिल शादमाँ[2] सा रहता है

ऐसे लम्हात कम ही होते हैं
वक़्त जब मेहरबाँ सा रहता है

उसको देखा नहीं मगर फिर भी
नाम वरद-ए-ज़बाँ[3] सा रहता है

बहते रहते हैं अश्क आँखों से
ये समुन्दर रवाँ सा रहता है

मोअजज़ा है वो सब के होंटों पर
बन के इक दास्ताँ सा रहता है

इस में सोचें उभरती रहती हैं
ज़हन अक्सर रवाँ सा रहता है

हम भी कुछ बे-नियाज़ रहते हैं
वो भी कुछ सरगराँ[4] सा रहता है

जलवा अफ़रोज़[5] है वो दिल में 'अर्श'
जो नज़र से निहाँ[6] सा रहता है

1. बोझ 2. ख़ुश 3. ज़बान के साथ 4. नाराज़ 5. नाज़–ओ–अदा के साथ 6. छुपा हुआ

ज़हन के पर्दे पे हैं धुँधली सी तस्वीरें कई
ज़िन्दगी इक ख़्वाब है लेकिन हैं ताबीरें कई

ख़त्म होते ही नहीं हैं आरज़ू के सिलसिले
क्या कहूँ पहना गये वो दिल को ज़ंजीरें कई

जब कभी इस दिल को तड़पाती है याद-ए-रफ़्तगाँ[1]
इन निगाहों में उभर आती हैं तस्वीरें कई

हर निगाह-ए-शौक़ को रहता है उस का इन्तिज़ार
हर निगाह-ए-शौक़ से होती हैं तक़सीरें[2] कई

दर्द, हसरत, यासियत, अफ़्सुर्दगी, बेचारगी
इस दिल-खुश-बख़्त के हैं नाम जागीरें कई

मेरा माज़ी भी है इन में हाल भी फ़र्दा भी है
दिल की दीवारों पे आवेज़ाँ[3] है तस्वीरें कई

'अर्श' ये नुक़्ता समझते हैं फ़क़त अहल-ए-शऊर[4]
आगही से वहम की कटती हैं ज़ंजीरें कई

1. जो लोग दुनिया से चले गए हैं 2. ग़लतियाँ 3. लगी हुई
4. बुद्धिमान

हम पे जब वक़्त पड़ा निकले पराए चेहरे
हम समझते रहे बरसों जिन्हें अपने चेहरे

आज इन्सान की पहचान बड़ी मुश्किल है
आज इन्सान है ओढ़े हुए कितने चेहरे

अहल-ए-दुनिया पे न खुल जाये हक़ीक़त इन की
इसलिए लोग छुपा लेते हैं अपने चेहरे

वक़्त के साथ बदल जाता है रंग-ए-दुनिया
अब वो इन्सान ही पहले से न उनके चेहरे

किस क़दर मुख़्तलिफ़ है ज़ाहिर-ओ-बातिन इन का
हम ने पहले कभी देखे न थे ऐसे चेहरे

दिल में हसरत लिए फिरते है कोई क़द्र करे
निगह-ए-शौक़ के किस दरजा हैं प्यासे चेहरे

लाज़मन उन की कशिश और भी बढ़ जाती है
मुस्कुरा देते हैं जब ख़ास अदा से चेहरे

गुनगुनाता हुआ वो जब भी गुज़रता है कभी
झाँकने लगते है दरवाज़ों से कितने चेहरे

इन मनाज़िर से निगाहें कभी मानूस[1] न थीं
'अर्श' आवेज़ाँ[2] है इक चेहरे पे कितने चेहरे

1. वाक़िफ़ 2. लगाये हुए

मिल सकूँ ख़ुद से ये इरादा है
वक़्त कम है सफ़र ज़ियादा है

मुझ को लाता नहीं ये ख़ातिर में
दिल भी कोई रईस ज़ादा है

किस क़दर ख़ुश-लिबास है दुनिया
ऐसे लगता है बे-लबादा है

वो है तहलील[1] मेरी रग-रग में
फिर भी उस की कमी ज़ियादा है

भूल जाता है हर वफ़ा मेरी
वो तबीअत का कितना सादा है

उस की हल्की सी मुस्कुराहट में
लुत्फ़ कम है सितम ज़ियादा है

होंट उस के बहार का मौसम
उस की आँखें कि रक़्स-ए-बादा[2] है

हर सितम से नवाज़ता है मुझे
दिल का वो किस क़दर कुशादा[3] है

दिल में उस के लिए कशिश है 'अर्श'
ये मिरा जुर्म-ए-बे-इरादा है

1. घुल जाना 2. शराब का रक़्स 3. खुला दिल

मेरे हालात से इक बार गुज़र कर देखो
जैसे बिखरा हूँ मैं तुम ऐसे बिखर कर देखो

हर क़दम सख़्त मराहिल से गुज़र कर देखो
ज़िन्दगी में कभी तनहा भी सफ़र कर देखो

मेरी वीरान सी आँखों से गुज़र कर देखो
मुझसे मिलना हो अगर दिल में उतर कर देखो

बारहा इस से उभरते है नए पहलू भी
झोंपड़ों में भी कभी उम्र बसर कर देखो

है मिरे दिल का तक़ाज़ा वो जिधर से गुज़रे
सूरत-ए-गर्द उन राहों में बिखर कर देखो

ख़ामियाँ जो भी हैं चेहरे पे उभर आयेंगी
रू-ब-रू[1] आईने के लाख सँवर कर देखो

ज़िन्दगी एक ही नुक्ते पे नहीं है मरकूज़[2]
तुम कभी हद्द-ए-अना[3] से भी गुज़र कर देखो

लाज़मन इस में तग़य्युर[4] की भी गुन्जाईश है
जैसा माहौल हो तुम उस में बसर कर देखो

दिल के खण्डरात में भी शहर बसे हैं क्या-क्या
'अर्श' इस वादी-ए-हसरत से गुज़र कर देखो

1. सामने 2. ठहरी हुई 3. अहम की हद 4. तब्दीली

वहम का जो शिकार होता है
कुश्त-ए-इन्तशार[1] होता है

मुस्कुरा कर मैं काट लेता हूँ
वरना हर लम्हा बार होता है

अपने माहौल का हर इक फ़नकार
उम्र भर क़र्ज़दार होता है

ज़िन्दगी हादसों की है तक़रीब
वक़्त नामा-निगार होता है

आज जिस का कोई वक़ार नहीं
वो बशर ज़ी-वक़ार[2] होता है

लोग कहते हैं ज़िन्दगी जिस को
दर्द का रेगज़ार[3] होता है

हर कली पर ख़ज़ाँ की ज़रदी है
ये भी रंग-ए-बहार होता है

इस में दुख-सुख हैं बर-सर-ए-पैकार[4]
दिल भी इक कारज़ार[5] होता है

'अर्श' ख़ुद अपने आप से मिलना
किस क़दर पुर-वक़ार होता है

1. बिखरा हुआ 2. इज़्ज़त वाला 3. रेत भरा मैदान 4. मुक़ाबला करना 5. जंग का मैदान

सिर्फ़ सफ़ीना इस से ग़ाफ़िल होता है
वरना हर इक मौज में साहिल होता है

रंग और कुछ होता है फिर महफ़िल का
जब भी कभी वो रौनक़-ए-महफ़िल होता है

तेरी हर मंज़िल का संग-ए-मील[1] हैं ये
तू आलाम[2] से नाहक़ बद-दिल होता है

कहने करने में है बस इतना ही फ़र्क़
कहना आसाँ करना मुश्किल होता है

जो न किसी की मुश्किल का अहसास करे
कौन आख़िर इतना पत्थर-दिल होता है

ये सच है मंज़िल पे पहुँचने वालों का
जो भी क़दम हो जानिब-ए-मंज़िल होता है

हर नाज़ुक दिल में है दर्द का इक पहलू
हर पहलू में इक नाज़ुक दिल होता है

कितने करिश्मे उस के एक इशारे पर
मुर्शिद-ए-कामिल, मुर्शिद-ए-कामिल होता है

माज़ी से बदतर हो जिन का हाल ऐ 'अर्श'
ऐसे लोगों का क्या मुस्तक़बिल होता है

1. बुनियादी पत्थर 2. मुसीबतें 3. मुकम्मल गुरु

तिरे क़रीब हो जो ख़ुद से दूर होता है
अमल का रद्द-ए-अमल[1] भी ज़रूर होता है

हैं उस की सोच के महदूद दायरे इतने
हर एक शख़्स में जितना शऊर[2] होता है

हो दिल में जज़्ब जो सूरत वो मिट नहीं सकती
कभी कभी मगर ऐसा ज़रूर होता है

किया था उस ने ये वादा ज़रूर आयेगा
इक ऐसी रुत में जब आमों पे बूर होता है

यक़ीन रखता है वो हाथ की लकीरों में
जो ज़िन्दगी में हक़ायक़ से दूर होता है

मुझे ये इल्म है तेरे बग़ैर मैं क्या हूँ
इक ऐसा लफ़्ज़ जो मानी से दूर होता है

मुझे अज़ीज़ बहुत है ये तशनगी[3] मेरी
कि तशनगी में बला का सरूर होता है

वही समझता है कुछ लज़्ज़त-ए-सफ़र ऐ 'अर्श'
वो राहगीर[4] जो मंज़िल से दूर होता है

1. मनफ़ी असर 2. अक़्ल 3. प्यास 4. मुसाफ़िर

कितनी मासूम है हँसी उसकी
और इस पर ये सादगी उसकी

ग़म भी बख़्शे तो ये करम उसका
मोअतबर मुझ को हर ख़ुशी उसकी

जो सर-ए-रह चराग़ जलता है
उसकी अज़्मत है रौशनी उसकी

वो कि नग़मा-सरा-ए-हक़[1] ठहरा
लोग उड़ाते रहे हँसी उसकी

सौ ग़लत फ़हमियाँ हुई पैदा
रंग लाई ये ख़ामुशी उसकी

उस में भी है शऊर-ए-ख़ुद्दारी[2]
जिस की औक़ात मुफ़्लिसी उसकी

दूर जो दुश्मनी के फ़न से है
मुझ को मरग़ूब[3] दोस्ती उसकी

वो है सूरज अगर तो याद रहे
सब की ख़ातिर है रौशनी उसकी

ज़िन्दगी में हर इक क़दम पर 'अर्श'
हम ने महसूस की कमी उसकी

1. सच्चाई के नग़मे गाने वाला 2. समझने की ताक़त 3. प्यारी

सितमगरी[1] में वो दिल के बड़े कुशादा[2] थे
वफ़ा के बाब में मोहतात कुछ ज़ियादा थे

न आ सका कभी दिल में ख़्याल तौबा का
गुनाह जो हुए हम से वो बे-इरादा थे

कहाँ पे खो गये है साये उन बजुर्गों के
कहाँ है पेड़ जो आँगन में ईस्तादा[3] थे

यही सबब है तवाज़ुन[4] न रह सका क़ायम
कि ज़िन्दगी में ख़ुशी कम थी ग़म ज़ियादा थे

वही था उस का रवैया वही थी उस की अदा
ये और बात हम हस्सास कुछ ज़ियादा थे

हरम की दैर की अज़्मत बजा है अपनी जगह
जो ग़मज़दा[5] थे अज़ीज़ उन को जाम-ओ-बादा
थे

किसी तरह भी न कुछ कम थी अहमियत उन की
भरी बहार में जो पेड़ बे-लबादा[6] थे

वो जान-बूझ के खाते थे दूसरों से फ़रेब
जनाब-ए-'अर्श' तबीअत के कितने सादा थे

1. ज़ुल्म करना 2. दिल के खुले 3. खड़े 4. बराबरी
5. ग़मों के मारे 6. नंगे

नित नए हादिसात करती है
ज़िन्दगी तजुरबात करती है

किस लिए वो लबों को जुम्बिश[1] दे
हर नज़र उस की बात करती है

राहतों का हसीन शीराज़ा[2]
मुन्तशर[3] ग़म की रात करती है

उस सितम की है बात ही कुछ और
जो सितम उस की ज़ात करती है

उस की मासूम सी अदा अक्सर
इक न इक वारदात[4] करती है

वो उजाला हो या धुँधलका हो
जज़्ब हर चीज़ रात करती है

आदमी से जो हो नहीं सकता
गर्दिश-ए-कायनात करती है

वो किसी और को नसीब कहाँ
जो असर उस की बात करती है

इस में होती है तमकनत[5] ऐ 'अर्श'
ज़िन्दगी जब भी बात करती है

1. हरकत 2. सिलसिला 3. बिखरना 4. वाक़्या 5. घमण्ड

ज़िन्दगी धूल है और कुछ भी नहीं
काग़ज़ी फूल है और कुछ भी नहीं

आप दुनिया में बरतर[1] है हर शख़्स से
आप की भूल है और कुछ भी नहीं

ये उड़े तो हर इक शय से पर्दा हटे
दूर तक धूल है और कुछ भी नहीं

मैं समझता हूँ हर इक को अपनी तरह
ये मिरी भूल है और कुछ भी नहीं

ये हक़ीक़त है ज़हनों में बिखरी हुई
वहम की धूल है और कुछ भी नहीं

जो ख़ुशी भी है दिल में नहीं दायमी[2]
मौसमी फूल है और कुछ भी नहीं

तेरी बातों में ऐ रहबर-ए-मोहतरम!
तूल[3] ही तूल है और कुछ भी नहीं

'अर्श' जिस पर है मंज़िल का धोका तुझे
राह की धूल है और कुछ भी नहीं

1. दूसरों से अच्छे 2. हमेशा रहने वाली 3. फैलाव

ग़म उठाया है उम्र भर कितना
रह गया हूँ मैं टूट कर कितना

झूट पर है गुमाँ हक़ीक़त का
उस की बातों में है असर कितना

जिस का घर में कोई वक़ार नहीं
शहर में है वो मोअतबर कितना

रूह से जिस्म का सवाल है ये
और बाक़ी है अब सफ़र कितना

उस में तुम जो नहीं तो कुछ भी नहीं
यूँ तो आरास्ता[1] है घर कितना

हम को भी ये ख़बर नहीं कि उसे
हम ने चाहा है टूट कर कितना

उस ने पूछा है "आप कैसे हैं"
दिल है खुश इतनी बात पर कितना

हर किसी को तलाश है उस की
हर कोई ख़ुद से बेख़बर कितना

उस की मुबहम[2] सी इक नज़र ऐ 'अर्श'
कर गई मुझ को मुन्तशर[3] कितना

1. सजा हुआ 2. जो साफ़ न हो 3. बिखराव

देखे है बहुत रस्ता हर राह गुज़र उसका
मालूम नहीं कब तक आना हो इधर उसका

उस से बड़ी मुद्दत से मिलने की तमन्ना है
इस वादी-ए-हसरत[1] से कब होगा गुज़र उसका

जचती ही नहीं हरगिज़ नज़रों में कोई शय भी
मालूम नहीं क्या है मक़सूद[2]-ए-नज़र उसका

क्या ख़ूब रफ़ाक़त[3] थी बरसों की रफ़ाक़त भी
हँसते रहे हमसाये जलता रहा घर उसका

नश्तर की तरह दोनों पैवस्त हैं इस दिल में
मासूम अदा उस की अन्दाज़-ए-नज़र उसका

आँखों में वो आँसू से होंटों पे तबस्सुम सा
रोती सी वो दीवारें हँसता सा वो घर उसका

हर लम्हा तग़य्युर[4] है जब उस की तबीअत में
आयेगा समझ में क्या मफ़हूम-ए-नज़र[5] उसका

वो साहब-ए-दिल भी है लेकिन है सितमगर भी
पत्थर की हैं दीवारें शीशे का है घर उसका

ऐ 'अर्श' मुनासिब है जो दिल में है कह डालें
क्या इल्म कि फिर कब हो बस्ती मे गुज़र उसका

1. आशाओं की वादी 2. मक़सद 3. साथ 4. बदलाव
5. नज़र का मौज़ू

अज़ायम[1] से जहाँ आरास्ता तदबीर होती है
उसी इक आस्ताँ पर सरनगूँ[2] तक़्दीर होती है

कभी ये ज़िन्दगी ऐसी भी इक तस्वीर होती है
कहीं बस ख़्वाब होते हैं कहीं ताबीर होती है

मैं माज़ी की हसीं परछाईयों में खो सा जाता हूँ
नज़र के सामने धुँधली सी इक तस्वीर होती है

उतर जाता है इक इक लफ़्ज़ इस का रूह में अक्सर
मुहब्बत की ज़बाँ में किस क़दर तासीर होती है

न जाने कौन से हालात सद्द-ए-राह[3] होते हैं
तिरी आमद में अक्सर बेसबब ताख़ीर होती है

बहुत जी चाहता है ज़िन्दगी में मुस्कुराने को
मगर कोई न कोई फ़िक्र[4] दामनगीर होती है

कभी होंटों पे होती हैं तबस्सुम की लकीरें सी
कभी दिल में सरापा दर्द की तस्वीर होती है

बराबर देखती रहती है अन्दाज़-ए-मुहब्बत से
बहुत ही मुख़्तलिफ़ तुझ से तिरी तस्वीर होती है

सुना है 'अर्श' हमने वो जिधर से भी गुज़रजायें
वहाँ की रहगुज़र की गर्द भी अक्सीर होती है

1. वलवले 2. झुकना 3. रास्ते की रुकावट 4. चिन्ता

गुनगुनाती है ख़ामुशी कितनी
छत पे बिखरी है चाँदनी कितनी

उस ने हर बात से किया महरूम
इस करम की भी है ख़ुशी कितनी

वक़्त से कर सके न समझौता
हम हैं ये भी थी इक कमी कितनी

ख़ाली ज़हनों में सोच क्या आये
इन ज़मीनों में है नमी कितनी

मुस्कुराहट है जिन के चेहरों पर
उन दिलों में फ़सुर्दगी कितनी

जो भी शय है वो नामुकम्मल है
यानि हर शय में है कमी कितनी

मेरी नज़रों में सौ तक़ाज़े हैं
उस के होंटों पे ख़ामुशी कितनी

यूँ तो जीने को जी रहे हैं हम
इसमें है आप की कमी कितनी

क़हक़हे जैसे उड़ते बादल हों
हर मसर्रत है आरज़ी कितनी

1. उदासी 2. ख़ुशी, चाहत

अपने दम से हैं सारे हँगामे
हम जो चुम हैं तो ख़ामुशी कितनी

उनकी कुर्बत[3] में रह के भी उनकी
हम ने महसूस की कमी कितनी

दिल को डसती है इस की वीरानी
घर के अन्दर है ख़ामुशी कितनी

अब नहीं इस में कोई भी अहसास
आदमी में है बेबसी कितनी

जाम ख़ाली पड़े हैं मुद्दत से
मयकदे में है तश्नगी[4] कितनी

उन के होंटों की मुस्कुराहट से
है फ़ज़ाओं में नग़्मगी कितनी

हम ख़ला[5] में हैं मायल-ए-परवाज़[6]
और ख़ुद से है आगही[7] कितनी

'अर्श' ये इक चराग़ क्या जाने
कितनी ज़ुल्मत है रौशनी कितनी

3. साथ 4. प्यास 5. आसमान 6. उड़ने के लिए तैयार 7. जानकारी

दिल पे गहरे ज़ख़्म हैं जो इन का अन्दाज़ा न कर
वाक़्यात-ए-उम्र-ए-रफ़्ता[1] को तर-ओ-ताज़ा न कर

उसके मन की मौज है वो कब निकल आए यहाँ
रात ढलने को है फिर भी बन्द दरवाज़ा न कर

मेरे होंटों पर अगर चुप है तो कोई बात है
ख़ामुशी से दिल की कैफ़िय्यत का अन्दाज़ा न कर

जो हक़ीक़त है निगाहों से भी होती है अयाँ
अपने चेहरे पर अबस ज़ेबाइश-ए-ग़ाज़ा न कर

ज़िन्दगी में हम कभी दो जिस्म और इक जान थे
भूली-बिसरी बात है ये इस को अब ताज़ा न कर

अपनी कश्ती इसके ज़ेर-ओ-बम[2] से कर दे हमकिनार
दूर से तूफ़ान की शिद्दत का अन्दाज़ा न कर

ज़िन्दगी के जिन मराहिल से गुज़र आया हूँ 'अर्श'
तल्ख़ तर बातें हैं ये इन को तर-ओ-ताज़ा न कर

1. गुज़री हुई ज़िन्दगी के वाक़्यात 2. उतार-चढ़ाव

यक़ीनन रंज का ख़ू-गर[1] नहीं है
अगर दिल दर्द का पैकर नहीं है

ज़माने से कहाँ तक निभ सकेगी
ये सब कुछ मुन्हसिर मुझ पर नहीं है

मिरी यादें हैं कितने ही दिलों में
कहूँ क्योंकर कि मेरा घर नहीं है

कभी संजीदगी से ग़ौर करना
मिरी जो बात है बे-पर नहीं है

न क्योंकर इस क़दर हस्सास होगा
ये दिल है राह का पत्थर नहीं है

मैं कोशिश में हूँ याद आ जाये मुझ
क ा
कोई इल्ज़ाम जो मुझ पर नहीं है

सभी पत्थर को हीरा मानते हैं
मगर हीरा कभी पत्थर नहीं है

मिले ऐ 'अर्श' बेशक ख़ुश्क रोटी
मुझे इज़्ज़त से कुछ बढ़कर नहीं है

1. आदी

किसी भी ज़विये से मोअतबर नहीं होते
जो ज़िन्दगी में कभी दर-ब-दर नहीं होते

कहाँ पे होगी मुलाक़ात क्या बतायें हम
जहाँ में ख़ाना-ब-दोशों के घर नहीं होते

ये फैल जाती हैं जंगल में आग की सूरत
अगरचे कहने को बातों के पर नहीं होते

कुछ ऐसे लोग भी हैं इल्म-ओ-फ़न की दुनिया में
नज़र तो रखते हैं अहल-ए-नज़र नहीं होते

नहीं है उसका करम फिर भी जी रहे हैं हम
बग़ैर छत के क्या लोगों के घर नहीं होते

जो ज़िन्दगी है तो ग़म भी हैं साथ-साथ इसके
कोई नदी नहीं जिस में भँवर नहीं होते

ये और बात न आये कभी ख़्याल अपना
मगर ज़माने से हम बे-ख़बर नहीं होते

हुई हैं किस तरह हायल ये दूरियाँ हम में
सवाल ऐसे सर-ए-रहगुज़र[1] नहीं होते

करें तो क्या करें उन से कोई तवक़्क़ो 'अर्श'
जो मुश्किलों में शरीक-ए-सफ़र[2] नहीं होते

1. रस्ते में 2. सफ़र में शामिल

ज़िन्दगी में वही पल राहत-ए-जाँ[1] भी गुज़रा
अपनी ही ज़ात पर जब उनका गुमाँ भी गुज़रा

मेरे माहौल की ज़ुल्मत न मिटेगी इससे
वो अगर साथ लिये काहकशाँ भी गुज़रा

आज जो सूरत-ए-हालात है पहले तो न थी
गुलसिताँ से कभी था दौर-ए-ख़ज़ाँ भी गुज़रा

ये अलग बात कि हम जानिब-ए-मन्ज़िल थे रवाँ
राह में मरहला-ए-सूद-ओ-ज़ियाँ[2] भी गुज़रा

दिल-ए-अफ़्सुर्दा की अफ़्सुर्दगी कम हो न सकी
दिल की बस्ती से कोई रंग-फ़शाँ भी गुज़रा

बावजूद इस के रहा सब की नज़र का मरकज़
मैं तिरे शहर से बे-नाम-ओ-निशाँ भी गुज़रा

आप के ज़िक्र से दिल को बड़ी तस्कीन मिली
आप का ज़िक्र तबीअत पे गराँ भी गुज़रा

आने अन्दाज़-ए-तग़ाफ़ुल पे पशेमान है 'अर्श'
देख कर उस को कभी ऐसा गुमाँ भी गुज़रा

1. ज़िन्दगी की ख़ुशी 2. फ़ायदा-नुक़्सान का मरहला

वो वफ़ा थी या जफ़ा अच्छी लगी
आप की हर इक अदा अच्छी लगी

जिन से अपना कोई भी रिश्ता न था
उन बजुर्गों की दुआ अच्छी लगी

याद आता है कि राह-ए-शौक़ में
दिल ने की जो भी ख़ता अच्छी लगी

दैर-ओ-काबा में घुटन थी सर-ब-सर
मयकदे की ये फ़ज़ा अच्छी लगी

आपने पूछा है ये "हम कौन हैं"
आपकी ये भी अदा अच्छी लगी

एक मौसीक़ी सी उभरी दूर तक
दिल को सहरा की सदा अच्छी लगी

ज़िन्दगी की इन्तिहा को छोड़िये
ज़िन्दगी की इब्तिदा अच्छी लगी

बारहा उस की वफ़ा आई न रास
बारहा उस की जफ़ा अच्छी लगी

'अर्श' उस काफ़िर के हर अन्दाज़ से
अजनबी पन की अदा अच्छी लगी

सितम मुझ पर रवा बेजा हैं कितने
यहाँ मेरे करम-फ़रमा हैं कितने

तिरे दिल में हैं जो महफ़ूज़ अब तक
नज़र से राज़ वो अफ़्शा[1] हैं कितने

कभी ग़म राहत-ए-दिल का हैं बायस
कभी राहत से ग़म पैदा हैं कितने

नज़र में यास-ओ-ग़म के दायरे हैं
नज़र में दूर तक सहरा हैं कितने

वो गुज़रा ही नहीं इन मरहलों से
उसे क्या इल्म हम तनहा हैं कितने

चले थे लोग जब इक कारवाँ था
रवाँ मन्ज़िल पे अब तनहा हैं कितने

यहाँ बे-जुर्म मिलती हैं सज़ाएँ
मगर ये फ़ैसले बेजा हैं कितने

कभी पूरे नहीं होंगे ये फिर भी
तिरे वादे उम्मीद-अफ़्ज़ा[2] हैं कितने

जनाब-ए-'अर्श' किस को ढूँढते हैं
सर-ए-मंज़िल नकूश-ए-पा[3] हैं कितने

1. ज़ाहिर 2. हौसला बढ़ाने वाले 3. पाँवों के निशान

ये गर्द-ए-राह की सूरत बिखरता रहता है
हज़ार मरहलों से दिल गुज़रता रहता है

है लाज़मन किसी अहसास-ए-कमतरी का शिकार
वो बात-बात पर तनक़ीद करता रहता है

नज़र में रखता है वो पहले सादा ख़ाकों को
फिर उन में आरज़ू के रंग भरता रहता है

हूँ इस में ख़ाकियाँ जितनी भी रंग लाती हैं
खुद अपने साये से इन्सान डरता रहता है

वो जिस से तर्क-ए-तअल्लुक़ को मुद्दतें गुज़रीं
ख़्याल की तरह दिल में उभरता रहता है

तमाम ज़िन्दगी कटती है इस की गर्दिश में
तमाम ज़िन्दगी इन्साँ बिखरता रहता है

उसे पसन्द है क्या और ना-पसन्द है क्या
सवाल दिल में ये अक्सर उभरता रहता है

कहाँ पे एक सी रहती है शिद्दत-ए-जज़्बात
चढ़ा हुआ हो जो दरिया उतरता रहता है

नहीं ये इल्म कि हैं कौन 'अर्श' सहबाई
मगर ये नाम नज़र से गुज़रता रहता है

वो फूलों का रंग हैं बू हैं
इक महकी-महकी ख़ुश्बू हैं

कल भी थीं ये भीगी-भीगी
आज भी आँखों में आँसू हैं

आप को काँटों से क्या निस्बत
आप तो फूलों की ख़ुश्बू हैं

उन की हर इक बात अलग है
हर इक बात के सौ पहलू हैं

तुम ठहरे सावन का बादल
हम सहरा की तपती लू हैं

ज़िक्र है जिन का शर्म का बायस
अब ऐसे मन्ज़र हर सू हैं

वो आँखें मस्ती का संगम
कभी जाम हैं कभी सबू हैं

वो जिन से इख़्लास था क़ायम
हम उन क़दूरों की ख़ुश्बू हैं

'अर्श' बहाए जो भी चाहे
हम गोया मुफ़लिस का लहू हैं

हादसों के नगर में रहता हूँ
मैं मुसलसल सफ़र में रहता हूँ

मुझ पे नज़रें है इस ज़माने की
जब से मैं उस नज़र में रहता हूँ

ख़ामुशी से नहीं हूँ मैं मानूस
हल्क़ा-ए-शोर-ओ-शर में रहता हूँ

मुझ को ढूँढो न जुल्मत-ए-शब में
मैं तलूअ-ए-सहर में रहता हूँ

काश मिल जाए हम सफ़र कोई
इसलिए मैं सफ़र में रहता हूँ

अपनी औक़ात से नहीं ग़ाफ़िल
गर्द हूँ रहगुज़र में रहता हूँ

फ़ित्ना-साज़ी से मुझ को नफ़रत है
दूर हर फ़ित्ना-गर से रहता हूँ

कौन आए यहाँ मुझे मिलने
मैं शिकस्ता से घर में रहता हूँ

दिल के जज़्बात की हूँ नाव 'अर्श'
उस नज़र के भँवर में रहता हूँ

ख़ून-ए-उम्मीद कभी ख़ून-ए-तमन्ना बन कर
हम रहे वक़्त की नज़रों में तमाशा बन कर

कितने जाँ-सोज़[1] मराहिल से गुज़र था अपना
ज़िन्दगी रह गई इक आग का दरिया बन कर

आज के दौर-ए-कशाकश में कहाँ भटकोगे
तुम मिरे साथ रहो मेरी तमन्ना बन कर

जिन से दानिस्ता[1] बचा लेता हूँ दामन अपना
घेर लेती हैं वो यादें ग़म-ए-फ़र्दा बन कर

क्या ख़बर थी कि गुल-ए-तर से हैं जो मुझको
अ ज . ा ज .
वो मिरे दिल में उतर जायेंगे काँटा बन कर

हम गुज़रते भी तो किस मोड़ से किस मरकज़ से
हादिसे फैल गये यास का सहरा बन कर

तू बड़े शौक़ से हम को नज़र अन्दाज़ करे
हम तिरे साथ रहेंगे तिरा साया बन कर

वो हमें ग़ौर से सुनता उसे फ़ुर्सत ही न थी
सख़्त नादिम हुये हम हर्फ़-ए-तमन्ना बन कर

'अर्श' अब याद न कर गुज़री हुई बातों को
अश्क उमड आयेंगे इक आग का दरिया बन कर

1. जान को जला देने वाले 2. जान–बूझ कर

दिल में हैं जज़्ब ग़म-ओ-दर्द के पैकर कितने
एक क़तरे में समाये हैं समुन्दर कितने

सई-ए-परवाज़-ए-बशर[1] कर गई पामाल इन्हें
खुद पे मग़रूर थे वरना मह-ओ-अख़्तर कितने

अपनी आँखों से लगाया इन्हें फूलों की तरह
हक़ परस्तों पे बरसते रहे पत्थर कितने

मुस्कुराहट में छुपाये हैं कई ग़म वरना
रग़-ए-अहसास पे चलते रहे नश्तर कितने

ग़ैर मुमकिन था कि मैं दस्त-ए-तलब[2] फैलाता
सामने मेरे छलकते रहे साग़र कितने

दर-ओ-दीवार से पूछा है तआरुफ़ अपना
अपने घर में हैं मगर फिर भी हैं बेघर कितने

अब नुमायाँ है बहुत वक़्त के माथे की शिकन
अब हैं हालात के बिगड़े हुये तेवर कितने

अब भी दिल में हैं सुलगती हुई यादें कितनी
अब भी आँखों में हैं जलते हुए मन्ज़र कितने

'अर्श' क्या दिल में समाई कि करें उसकी तलाश
अपनी ही ज़ात से हम रह गये कट कर कितने

1. इन्सान के उड़ने की कोशिश 2. भीक के लिये हाथ फैलाना

वो अपनी याद का गर्द-ओ-ग़ुबार छोड़ गया
अजीब शख़्स था क्या यादगार छोड़ गया

कहीं हैं तज़करे उस के कहीं हैं अफ़्साने
बिछड़ के वो कई नक़्श-ओ-निगार छोड़ गया

मिरी निगाहें उसी को तलाश करती हैं
जो आरज़ू के शिकस्ता मज़ार छोड़ गया

ख़ुदा करे कि उसे मेरा इन्तज़ार रहे
मिरे लिए जो ग़म-ए-इन्तिज़ार छोड़ गया

न उस में अजनबी पर था न कोई अपनापन
वो ज़हन-ओ-दिल में अजब इन्तशार[1] छोड़ गया

उसे भी काश कभी इस चुभन का हो अहसास
जो दिल के पास कहीं मिस्ल-ए-ख़ार[2] छोड़ गया

मैं इक चराग़ की मानन्द जल रहा हूँ 'अर्श'
मुझे ये कौन सर-ए-रहगुज़ार छोड़ गया

1. बिखराव 2. काँटे की तरह

याद-ए-माज़ी जो सताये तो मुझे ख़त लिखना
ज़िन्दगी रास न आये तो मुझे ख़त लिखना

नींद रातों को न आये तो मुझे ख़त लिखना
याद इस दरजा सताये तो मुझे ख़त लिखना

दिल की धड़कन भी सुनाई न अगर दे तुमको
नब्ज़-ए-दिल डूब सी जाये तो मुझे ख़त लिखना

चैन लेने नहीं देगी कभी सावन की फुहार
तन को ये आग लगाये तो मुझे ख़त लिखना

फैल जायें जो कभी दिल की हसीं वादी में
हसरत-ओ-यास[1] के साये तो मुझे ख़त लिखना

अपनी आँखों में सजा लेना मेरे ख़्वाबों को
इस पे भी नींद न आये तो मुझे ख़त लिखना

दर्द की टीस हो या दर्द हो तनहाई का
ये घटा झूम के छाये तो मुझे ख़त लिखना

मेरे अशआर को पढ़ कर शब-ए-तनहाई[2] में
ज़िन्दगी झूम न जाये तो मुझे ख़त लिखना

'अर्श' कुछ याद नहीं उस ने कहा था इक बार
दिल अगर चैन न पाये तो मुझे ख़त लिखना

1. मायूसी 2. अकेलेपन की रात

ज़िन्दगी की राहों में मिस्ल-ए-कारवाँ[1] ठहरा
सिलसिला मसायब का कितना बेकराँ[2] ठहरा

जब नज़र नहीं आता आग का निशाँ कोई
ज़िन्दगी का हर मन्ज़र क्यों धुआँ-धुआँ ठहरा

हक़ परस्तियों ने भी क्या सिला दिया मुझको
संग-ए-मील था लेकिन गर्द-ए-कारवाँ ठहरा

इन्क़लाब क्या होगा इस से बढ़ के दुनिया में
कारवाँ का रहज़न ही मीर-ए-कारवाँ ठहरा

कौन सी ये वादी है कौन सी ये बस्ती है
आरज़ू है यख़ बस्ता[3] दिल धुआँ-धुआँ ठहरा

हम न होंगे तो दुनिया इस को भूल जायेगी
कौन बावफ़ा निकला कौन हक़ बयाँ[4] ठहरा

मस्लिहत से टकरा कर गुम हुई ख़ुदी मेरी
हमसफ़र था जो मेरा राह में कहाँ ठहरा

इक न इक मुसीबत का हमको क़ुर्ब हासिल है
जब से बर्क़ की ज़द में अपना आशियाँ ठहरा

'अर्श' क्या भुलायें हम वक़्त की नवाज़िश[5] को
ज़ख़्म जो लगा दिल पर नक्श-ए-जाविदाँ[6] ठहरा

1. कारवाँ की शक्ल में 2. दूर तक फैला हुआ 3. बर्फ़ की तरह जमी हुई 4. सच कहना 5. मेहरबानी 6. हमेशा रहने वाला

ज़िन्दगी के लिये ये मरहले दुश्वार सही
गर्दिश-ए-वक़्त के बिगड़े हुए अतवार सही

ये भी कुछ कम नहीं अरबाब-ए-चमन[1] का तोहफ़ा
मेरे दामन में हसीं फूल नहीं ख़ार सही

सिर्फ़ जीने की अदा से नहीं वाक़िफ़ वरना
लोग इस दौर के सुलझे हुए फ़नकार सही

इस में जो कर्ब-ए-मुसल्सल है छुपेगा क्योंकर
उनके होंटों की हँसी मतलअ-ए-अनवार[2] सही

इतना बेदार कहाँ अहल-ए-ज़माना का शऊर
हर नई सोच अभी राह की दीवार सही

मौज-ए-तूफ़ाँ से मगर पार उतरना है मुझे
मेरी तक़दीर में टूटी हुई पतवार सही

'अर्श' हम फिर भी दिल-ओ-जाँ से हैं इस पर शैदा[3]
ज़िन्दगी रेत की गिरती हुई दीवार सही

1. गुलशन के दोस्त 2. रौशनी 3. शैदाई, कुर्बान

दिल के सहरा में हैं गुल-हाए-तमन्ना कितने
खुश्क आँखों में हैं बहते हुए दरिया कितने

कितने चेहरे हैं मगर कोई भी मानूस[1] नहीं
किस क़दर भीड़ है हम फिर भी है तनहा कितने

सोचता हूँ कि न हो तेरी अना की तौहीन
वरना कह दूँ कि तिरे जोर[2] हैं बेजा कितने

इक कशाकश में रहा अपना सफ़ीना अक्सर
हम तलातुम से उसझते रहे तनहा कितने

तू समझता है नहीं इन से ज़माना वाक़िफ़
दिल के ये राज़ निगाहों से हैं अफ़्शा कितने

दिल में जो ज़ख़्म-ए-तमन्ना है तर-ओ-ताज़ा है
लहलहाते है यहाँ दर्द के सहरा कितने

हमने सोचा था कि हर बात सुलझ जायेगी
बहस से और मसायल हुए पैदा कितने

ज़िन्दगी क्या है ये पूछे कोई हम से ऐ 'अर्श'
तैर कर आये हैं हम आग के दरिया कितने

1. जान-पहचान वाला 2. जुल्म

कभी चिराग़ की सूरत जलोगे साथ मिरे
तुम्हीं कहो कि कहाँ तक चलोगे साथ मिरे

वफ़ा की राह में तुम मेरे हम सफ़र न बनो
कठिन है राह ये कब तक चलोगे साथ मिरे

पता चलेगा तुम्हें जलना कितना मुश्किल है
जो दूसरों के ग़मों में जलोगे साथ मिरे

कड़े सफ़र में कोई कब शरीक होता है
मैं इतना किस से कहूँ तुम चलोगे साथ मिरे

न सह सकोगे तमाज़त[1] मिरे असूलों की
तमाम ज़िन्दगी नाहक़ जलोगे साथ मिरे

हूँ एक रूह मैं कोई नहीं मिरी मंन्ज़िल
ये बात सोच लो कितना जलोगे साथ मिरे

रहे ख़याल कि अपना वजूद खो दोगे
जो तुम भी शम्अ की सूरत जलोगे साथ मिरे

मिलेगा जो भी वही तन्ज़ से नवाज़ेगा
ये गर्द चेहरे पे तुम भी मलोगे साथ मिरे

जनाब-ए-'अर्श' से मिलने की कब से हसरत है
मुझे तो मिलना है तुम भी चलोगे साथ मिरे

1. आँच, गर्मी

वो हसीं चेहरा जब तक हिजाबों[1] में था
ये हक़ीक़त है ताज़ा गुलाबों में था

साफ़गोई[2] की ख़ातिर मिली हर सज़ा
ज़िन्दगी भर मैं कितने अज़ाबों[3] में था

नाख़ुदा की न इस पर नज़र पड़ सकी
एक तूफ़ाँ जो पिन्हाँ हुबाबों[4] में था

इक कशिश सी थी उस के सवालों में भी
ख़ास अन्दाज़ लेकिन जवाबों में था

आरज़ू उस की दिल में भी आँखों में भी
एक नग़्मा था कितने रुबाबों में था

वो बदन था कि मस्ती की इक लहर सी
जैसे नश्शा पुरानी शराबों में था

रात भर उस के होंटों पे चुप सी रही
रात भर वो मिरे साथ ख़्वाबों में था

'अर्श' दिल को मुय्यसर थे वो दिन कभी
जब शुमार इस का बिगड़े नवाबों में था

1. पर्दा 2. साफ़ बात कहना 3. मुसीबतें 4. पानी के बुलबुले

कोई उम्मीद नहीं इस में कोई आस नहीं
ये मोअजज़ा है कि इस पर भी दिल उदास नहीं

जबीन-ए-वक़्त[1] के तेवर हैं मेरी नज़रों में
मैं नब्ज़-ए-वक़्त की धड़कन से ना-शनास नहीं

न टूट पायेंगी हरगिज़ कोई भी सूरत हो
मिरी वफ़ायें हैं ये काँच का गिलास नहीं

हूँ सरफ़राज़[2] ख़लूस-ओ-वफ़ा के जज़्बे से
मैं ज़िन्दगी में किसी तौर बे-लिबास नहीं

वफ़ूर-ए-यास[3] भी सरमाया-ए-मसायब[4] भी
नहीं है कोई भी नेमत जो मेरे पास नहीं

ये कैसी साज़िशें हैं नाख़ुदा की तूफ़ाँ से
कोई भी नाव किनारों के आस-पास नहीं

है साँस लेना अगर ज़िन्दगी तो ज़िन्दा हूँ
मुझे नसीब है माहौल जो वो रास नहीं

नहीं है कोई भी जिस को सकून हासिल हो
नहीं है कोई भी जो कश्ता-ओ-हरास[5] नहीं

ये सोचता हूँ करूँ नज़्र उस की क्या ऐ 'अर्श'
सिवाय हसरतों के कुछ भी मेरे पास नहीं

1. वक़्त का माथा 2. मुअज़िज़, बुलन्द 3, 4. ना–उम्मीदी और मुसीबतें
5. डर का मारा हुआ

कितने ख़ादशात का अलाव है
ज़हन में इक अजब तनाव है

रुक गये कारवाँ ख़्यालों के
देखना कौन सा पड़ाव है

ग़ैर मुमकिन है इस का अन्दाज़ा
किस के सीने में कितना घाव है

मौज-ए-तूफ़ाँ से है जो सीना-सिपर
ये शिकस्ता सी किस की नाव है

सब खिलौने हैं एक मट्टी के
फिर भी लोगों में भेद-भाव है

इस में ग़म भी है और राहत भी
ज़िन्दगी का ये रख-रखाव है

अक़्ल में उलझनें हैं फ़र्दा की
दिल में जज़्बात का बहाव है

कोन ठहरेगा रू-ब-रू[1] इस के
वक़्त का तेज़ तर बहाव है

'अर्श' जिस का वजूद है मशकूक
उस से मिलने का दिल में चाव है

1. सामने

हर सितम पर है पशेमाँ सा सितमगर[1] मेरा
वो समझता था बिखर जायेगा पैकर[2] मेरा

एक नद्दी हूँ नहीं कम ये मुक़द्दर मेरा
रास्ता देखाता रहता है समुन्दर मेरा

यूँ तो कहने को चमन पर मिरा हक़ है लेकिन
ख़ार-ओ-ख़स ही न चमन के न गुल-ए-तर मेरा

बावजूद इसके तरद्दद[3] में यक़ीं रखता हूँ
मुझ को मालूम है जो भी है मुक़द्दर मेरा

नुक्ता-चीं[4] सब थे मिरी ज़ात पे हस्ब-ए-तौफ़ीक़
ज़िक्र होता रहा महफ़िल में बराबर मेरा

मेरी पहचान अलग हो ये कहाँ मुमकिन है
जज़्ब जब आप के पैकर में है पैकर मेरा

रक़्स-ए-बादा भी है और जोश पे है महफ़िल भी
फिर भी ख़ाली है बड़ी देर से साग़र मेरा

कितनी मुद्दत से पड़ा राह में इक पत्थर हूँ
जी में है कोई तराशे कभी पैकर मेरा

लग़्ज़िशें और भी सरज़द हुईं मुझ से ऐ 'अर्श'
ये ख़ता भी है कभी झुक न सका सर मेरा

1. ज़ुल्म करने वाला 2. वजूद 3. सोच, फ़िक्र 4. टिप्पणी करना

हर इक अदा-ए-नाज़ पे क़ुर्बान जाईये
उस चश्म-ए-नीमबाज़[1] पे क़ुर्बान जाईये

उनकी निगाह-ए-नाज़ के अन्दाज़ देख कर
उन की निगाह-ए-नाज़ पे कुर्बान जाईये

महव-ए-बहार[2] है कोई, कोई ख़ज़ाँ नसीब
उस रंग-ए-इम्तियाज़[3] पे कुर्बान जाईये

है ये अज़ल[4] से ख़ालिक़-ए-नग़्मात-ए-ज़िन्दगी[5]
दिल के शिकस्ता साज़ पे कुर्बान जाईये

हम मिट रहे हैं और ख़बर तक नहीं जिसे
उस चश्म-ए-बेनियाज़ पे कुर्बान जाईये

बहला रहे हैं दिल को ये महब्बत में हर घड़ी
ग़म हाय दिल-नवाज़ पे कुर्बान जाईये

बेशक निगाह-ए-नाज़ है दिल की हरीफ़
फिर भी निगाह-ए-नाज़ पे कुर्बान जाईये

1. आधी खुली हुई आँख 2. बहार में मस्त 3. फ़र्क़ 4. शुरु से
5. ज़िन्दगी के नग़मे पैदा करने वाला

वो है बरहम मुझे ये वहम-ओ-गुमाँ तक भी नहीं
आग जलती है मगर इस का धुआँ तक भी नहीं

हक़ परस्ती ने भी क्या हौसला बख़्शा मुझ को
जान सूली पे मगर लब पे फ़ुग़ाँ[1] तक भी नहीं

हमने तामीर किया इसमें नशेमन अपना
जिस गुलिस्ताँ में बहारों का निशाँ तक भी नहीं

ढूँढने आये हो खण्डरात मुहब्बत के यहाँ
अब तो आँखों में कोई अश्क-ए-रवाँ[2] तक भी नहीं

तूने रंगीन बहारों से नवाज़ा सब को
मेरे हिस्से में मगर बाद-ए-ख़ज़ाँ तक भी नहीं

देख कर जिस को उजालों का तसव्वुर उभरे
दूर तक बुझते चराग़ों का धुआँ तक भी नहीं

तेरा दावा कि ख़लाओं को करे गा तस्ख़ीर[3]
दस्तरस में तिरी ये उम्र-ए-रवाँ तक भी नहीं

उन की हर बात में शिद्दत की है तल्ख़ी फिर भी
दिल-ए-नाज़ुक पे कोई बात गराँ तक भी नहीं

हमने ऐ 'अर्श' ग़ज़ल को नया आहंग[4] दिया
बावजूद इसके कि हम अहल-ए-ज़ुबाँ तक भी नहीं

1. फ़रियाद 2. बहता हुआ आँसू 3. ख़त्म करना 4. अन्दाज़

उनकी यादों की हसीं परछाईयाँ रह जायेंगी
दिल को डसने के लिए तनहाईयाँ रह जायेंगी

हम न होंगे फिर भी बज़्म-आराईयाँ[1] रह जायेंगी
अपनी शोहरत के लिए रुसवाईयाँ रह जायेंगी

हम ख़ला की वुसअतों में इस तरह खो जायेंगे
दूर तक बिखरी हुई तनहाईयाँ रह जायेंगी

मिट न पायेंगे किसी सूरत भी माज़ी के नकूश
दिल की दीवारों पे कुछ परछाईयाँ रह जायेंगी

हम मुसाफ़िर हैं निकल जायेंगे हर बस्ती से दूर
और हम को ढूँढती पुरवाईयाँ रह जायेंगी

फूल से खुश्बू की सूरत हम जुदा हो जायेंगे
ये बहारें ये चमन आराईयाँ रह जायेंगी

मिस्ल-ए-नग़्मा[2] हम फ़ज़ा में जज़्ब हो जायेंगे 'अर्श'
गुनगुनाती, गूँजती शहनाईयाँ रह जायेंगी

1. महफ़िल सजाना 2. नग़मे की तरह

ज़िन्दगी में जब से ये इक मेहरबाँ से दूर है
दिल पे जो कुछ भी गुज़रती है बयाँ से दूर है

सर-ब-सर अब्हाम[1] है इस के सिवा कुछ भी नहीं
शायरी जो फ़िक्र-ओ-फ़न, हुस्न-ए-बयाँ से दूर है

दिल है जब जलता अलाव फिर मैं ये कैसे कहूँ
आरज़ू का शहर इस आतिशफ़िशाँ[2] से दूर है

इक नई तहज़ीब की सूरत में है उरियानियत[3]
रू-ब-रू है जो भी मन्ज़र वो बयाँ से दूर है

हल्क़ा-ए-मौज-ओ-तलातुम से है कश्ती हमकिनार[4]
साहिल-ए-मक़सूद अभी बहर-ए-रवाँ से दूर है

जब सियासत की जगह इन्सानियत लहरायेगी
वो हसीं माहौल अभी अहद-ए-रवाँ से दूर है

वो समझ सकता नहीं हरगिज़ मुहब्बत की ज़बाँ
ज़िन्दगी में जो बशर उर्दू ज़ुबाँ से दूर है

वो है मीर-ए-कारवाँ फिर भी नज़र आता नहीं
कारवाँ के साथ रह कर कारवाँ से दूर है

क्या कहूँ ऐ 'अर्श' इन नज़रों को है उनकी तलाश
जिस का साया भी मिरे वहम-ओ-गुमाँ से दूर है

1. जो साफ़ न हो 2. आग बरसाने वाला 3. नंगापन 4. जुड़ा हुआ

रूह परवर फ़ज़ाओं में रखना
याद मुझ को दुआओं में रखना

नग़मगी में फ़ज़ाओं में रखना
इक तबस्सुम अदाओं में रखना

ग़ैर फिर ग़ैर, अपने अपने हैं
फ़र्क़ कुछ धूप छाँव में रखना

हर नज़र शहर पर रहे मरकूज़[1]
दिल बहर हाल गाँव में रखना

ज़िन्दगी भी ये साथ-साथ रहें
कुछ कशिश सी ख़ताओं में रखना

ये झुलस जायेगा कदूरत से
दिल महब्बत की छाँव में रखना

जब है आँखों में बेकराँ[2] मस्ती
लड़खड़ाहट सी पाँव में रखना

लोग सारे नहीं हैं इक जैसे
कुछ तवाज़ुन[3] वफ़ाओं में रखना

'अर्श' की आरज़ू है बस इतनी
इस को दिल की सदाओं में रखना

1. लगी रहे 2. अथाह 3. सन्तुलन

वो जिस से दूर बहुत दूर ज़िन्दगी मेरी
उसी के साथ वाबस्ता है हर ख़ुशी मेरी

उड़ाई इस तरह हालात ने हँसी मेरी
न ख़ुद भी देखी गई मुझ से बेबसी मेरी

जहान वालों से जब भी फ़रेब खाओगे
करोगे लाज़मन महसूस तुम कमी मेरी

अलग था दोनों का अन्दाज़-ए-गुफ़्तगू[1] अक्सर
हुई है जब भी कभी बात आप की मेरी

मैं वो धुआँ हूँ जो तहलील[2] है फ़ज़ाओं में
बुझे चिराग़ की सूरत है ज़िन्दगी मेरी

जो आज मुझ से महब्बत के साथ मिलते हैं
न आयेगी उन्हें कल रोज़ याद भी मेरी

लबों की हल्की सी जुंबिश[3] भी इस में शामिल कर
न बुझ सकेगी इन नज़रों से तश्नगी[4] मेरी

मैं हक़-परस्ती ओ हक़-गोई का हूँ शैदा 'अर्श'
रही है इन के लिए वक़्फ़ ज़िन्दगी मेरी

1. बात करने का ढंग 2. मिला हुआ 3. हिलना 4. प्यास

अदा-ए-सलाम

चेहरे से अपने गेसू-ए-मुश्कीं[1] संभाल कर
पर्दे से अपना चाँद सा मुखड़ा निकाल कर
बाँकी अदा से रेशमी आँचल उछाल कर
दीवानावार आँखों को आँखों में डाल कर
कुछ मुस्कुरा के और जबीं[2] तक उठा के हाथ
"उसने मुझे सलाम किया किस अदा के साथ"

— जोश मलीह आबादी

1. ख़ुश्बूदार ज़ुल्फ़ें 2. माथा

अर्श सहबाई की दूसरी तसानीफ़

शिकस्त-ए-जाम	शे'री मजमूआ
शिगुफ़्त-ए-गुल	शे'री मजमूआ
सलीब	शे'री मजमूआ
ये झोंपड़े ये लोग	शे'री मजमूआ
रेज़ा रेज़ा वजूद	शे'री मजमूआ
असास	शे'री मजमूआ
नायाब	शे'री मजमूआ
दस्तरस	शे'री मजमूआ
चश्म-ए-नीम बाज़	शे'री मजमूआ
ख़द-ओ-ख़ाल	शे'री मजमूआ
तुझ बिन चैन कहाँ	उर्दू दोहे
तश्कील	मज़ाहिया और तन्ज़िया वाक़्यात
अंजुम कदा	तज़करा
ये जाने पहचाने लोग	तज़करा

9419133765

V.K. Sabharwal

C/o R-14

Radha Swami Satsang.



........मुख़्तसर ये कि 'अर्श' सहबाई उर्दू ग़ज़ल में अपना इन्फरादी रंग क़ायम कर चुके हैं और दौर-ए-जदीद में वो उर्दू के मुन्फरिद साहिब-ए-तर्ज़ ग़ज़ल गो शायर हैं।

'अर्श' ने अपनी शे'री इन्फ़रादियत का संग-ए-बुनियाद ''ज़िंदगी'' पर रखा है। इस लिए वो उस्तवार भी है और ज़िंदगी की तरह जमूद से बे-नियाज़ भी। इस में रवानी भी है, तसलसुल भी है। अस्ल में तसलसुल ही ज़िंदगी का ज़ामिन है। 'अर्श' सहबाई ने अपनी ग़ज़लों में ज़िंदगी को इस तरह पेश किया है कि वो ख़ुद अपना मेहवर बन जाती है। मैंने सोच-समझकर 'अर्श' को ''मुग़न्नी-ए-हयात'' क़रार दिया है। मेरे नज़दीक इन की ग़ज़ल की बुनियाद ब-राह-ए-रास्त ज़िंदगी पर है किसी कि तवस्सुत से नहीं लेकिन लुत्फ़ ये है कि इन की ग़ज़ल में आकर ज़िंदगी ख़ुद ग़ज़ल बन जाती है। मैं इसे इन की इन्फ़रादियत क़रार देता हूँ। ज़िंदगी लाख करवट बदलती रहे, अपने मेहवर बदलती रहे लेकिन हक़ीक़त ये है कि 'अर्श' सहबाई की ग़ज़लों का एक ही मेहवर है और वो है ज़िंदगी और इस के धनक रंग मुतहर्रक मनाज़िर।

-डॉक्टर जावेद विशिष्ट